संशोधित संस्करण : 2020

हिमाचल प्रदेश
में
रबी फसलों के लिए
अनुमोदन

प्रसार शिक्षा निदेशालय
चौधरी सरवण कुमार हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय
पालमपुर - 176062

संरक्षक :
डॉ यश पाल ठाकुर
निदेशक प्रसार शिक्षा

अनुवाद एवं सम्पादन
डॉ विनोद शर्मा
डॉ विशाल डोगरा
डॉ दीपिका सूद
डॉ लव भूषण
डॉ देश राज चौधरी
डॉ रवीन्द्र सिंह राणा

मूल्यः— ₹ 90/—

सहयोगः
निदेशक अनुसंधान, विभागाध्यक्ष, वैज्ञानिक,
कृषि अधिकारी एवं प्रसार विशेषज्ञ,
चौधरी सरवण कुमार हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय पालमपुर

संशोधित संस्करणः 2020—5000 प्रतियां

प्रस्तावना

हिमाचल प्रदेश विविध जलवायु वाला तथा प्राकृतिक सम्पदा एवं संसाधनों की दृष्टि से सम्पन्न पर्वतीय प्रदेश है, जहां क्षेत्र विशेष की जलवायु में भिन्नता के कारण अनुकूल वांछित संस्तुतियों की आवश्यकता पड़ती है ताकि प्रदेश का कृषक वर्ग वांछित लाभ उठा सके।

हिमाचल प्रदेश में कार्यरत कृषि अधिकारी तथा चौधरी सरवण कुमार हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर के वैज्ञानिक निरन्तर प्रदेश के किसानों की समस्यओं को समझने और उनके निदान में संलग्न रहते हैं। प्रस्तुत पुस्तक में रबी खाद्यान, दलहनी, तिलहनी, चारे वाली फसलों तथा शुष्क समीशीतोष्ण खण्ड की फसलों सम्बन्धी पूर्ण तकनीकी जानकारी समाविष्ट की गई है। इन सिफारिशों को कृषि अधिकारियों एवं वैज्ञानिकों की कार्यशालाओं में विचार–विमर्श के बाद ही संस्तुत किया जाता है।

पुस्तक में जिन नवीनतम तकनीकों की सिफारिश की गई है, उन्हे विश्वविद्यालय के मुख्य परिसर एवं अन्य अनुसंधान केन्द्रों एवं उपकेन्द्रों तथा कृषि विज्ञान केन्द्रों पर परखा गया है तथा गहन अनुसंधान एवं परीक्षण के बाद ही उन्हे संस्तुत किया गया है। इन पूरी गतिविधियों में अनुसंधान निदेशक का योगदान महत्त्वपूर्ण रहा है, जिसके लिए शाब्दिक आभार कोई ज्यादा महत्त्व नहीं रखता। वस्तुतः उन सब महानुभावों के प्रति आभार व्यक्त करना मेरा कर्त्तव्य है, जिन्होने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इस कार्य को सफल बनाने में योगदान दिया है तथा जिनके प्रयासों के फलस्वरूप ही यह पुस्तक अपना वर्तमान रूप ले सकी है। पुस्तिका में दी गई सिफारिशें सामान्य हैं। किसान भाई विशेष जानकारी के लिए जिला विशेष के कृषि विज्ञान केन्द्र से सम्पर्क बनाए रखें। मुझे विश्वास है कि इस पुस्तक में दी गयी जानकारी वैज्ञानिकों, कृषि विकास व प्रसार अधिकारियों तथा किसानों के लिए लाभकारी सिद्व होगी और प्रदेश में फसलों की पैदावार तथा गुणवत्ता में संवर्द्वन करने में सहायक सिद्व होगी।

(डा. वाई पी ठाकुर)

निदेशक, प्रसार शिक्षा

विषय सूची

अन्न की फसलें 1
गेहूं 1
जौं 12

दलहनी फसलें 16
चना 16
मसर 19

तिलहनी फसलें 21
भूरी सरसों 21
राया 22
गोभी–सरसों 23
तोरिया 25
अलसी 28

कन्द की फसल 32
आलू 32

चारे वाली फसलें 39
बरसीम 42
शफतल 44
रिजका (लुसर्न) 45
जई 46
रैड क्लोवर 48
व्हाईट क्लोवर 48
फैस्कयू 49
आरचर्ड ग्रास 50
राई घास 50

हरे चारे के लिए उत्पादन योजना एवं फसलें 52
परिशिष्ट–1 हिमाचल प्रदेश के कृषि–जलवायु पर आधारित खण्ड 55
परिशिष्ट–2 राइजोबियम से टीका करना 60
परिशिष्ट–3 नाईट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश उर्वरकों के स्त्रोत 61
परिशिष्ट–4 खरपतवार, कीट एवं फंफूद नाशियों के प्रयोग में मात्रा का निर्धारण 62
परिशिष्ट–5 उपज निर्धारण सबंधी धारणा 64
परिशिष्ट–6 फुलणू की रोकथाम 66
परिशिष्ट–7 भण्डारित अनाज के कीट 68
परिशिष्ट–8 अन्य हानिकारक जीव जन्तु 69
परिशिष्ट–9 उपयोग के लिये वर्जित कीटनाशक / खरपतवार नाशक 70
फसल एवं अनुमोदित किस्मों की विषय सूची 73

अन्न की फसलें

गेहूं

हिमाचल प्रदेश में गेहूं एक महत्वपूर्ण अन्न की फसल है। इसकी खेती मुख्यतः रबी मौसम में की जाती है जबकि लाहौल–स्पीति व किन्नौर जिलों व चम्बा जिला के पांगी व भरमौर में इसकी खेती गर्मी के मौसम (अप्रैल–मई से सितम्बर–अक्तूबर) में की जाती है। हिमाचल प्रदेश में 2017–18 में 318.9 हजार हैक्टेयर भूमि पर गेहूं की खेती की गई जिससे 565.8 हजार टन उत्पादन हुआ तथा 17.75 क्विंटल प्रति हैक्टेयर उपज हुई जबकि राष्ट्रीय औसत उपज 30.75 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

हिमाचल प्रदेश में लगभग 83 प्रतिशत भूमि पर बारानी खेती, अनुमोदित किस्मों की कम भूमि पर खेती, उर्वरकों का कम व असंतुलित प्रयोग, खरपतवारों, रतुआ व खुली कंगियारी का अधिक प्रकोप, आदि कम पैदावार के मुख्य कारण है।

अनुमोदित किस्में :

विभिन्न क्षेत्रों के लिए अनुमोदित किस्में

	निचले एवं मध्यवर्ती क्षेत्र	**ऊंचे क्षेत्र**	**ऊंचे बर्फानी क्षेत्र**
अगेती बिजाई	एच.एस.–542		
	एच.पी.डब्ल्यू–360		
	बी.एल.–829		
समय पर बिजाई	एच.पी.डब्ल्यू–155	एच.पी.डब्ल्यू–155	सप्तधारा
	एच.पी.डब्ल्यू–349	एच.पी.डब्ल्यू–236	हिम प्रथम (डी.एच.–114)
	एच.पी.डब्ल्यू–249		
	(केवल मध्यवर्ती क्षेत्र)		
	एच.पी.डब्ल्यू–236		
	वी.एल. गेंहू–907		
	एच.एस.–507		
	एच.पी.डब्ल्यू–368 (केवल निचले क्षेत्र)		
पछेती बिजाई	वी.एल. गेंहू–892		
	एच.एस.–490 (केवल निचले क्षेत्र)		

एच.पी.डब्ल्यू. 155 (ओंकार)

यह किस्म ऊंचे पर्वतीय क्षेत्रों में असिंचित भूमि पर समय पर बिजाई तथा प्रदेश के निचले तथा मध्यवर्ती क्षेत्रों की सिंचित व असिंचित भूमि पर भी समय की बिजाई के लिए अनुमोदित है। यह किस्म पीला तथा भूरा रतुआ रोग प्रतिरोधी है। यह किस्म खुली कंगियारी तथा पत्ता झुलसा रोग के लिए भी प्रतिरोधी पाई गई है। इसके पौधे गहरे हरे रंग के होते हैं। इसके दाने शरबती, मोटे तथा कठोर होते हैं। यह किस्म उर्वरकों को सहने की क्षमता रखती है। यह निचले तथा मध्यवर्ती पहाड़ी क्षेत्रों में एच.एस. 240, एच.पी.डब्ल्यू. 89 (सुरभि) तथा एच.पी.डब्ल्यू. 184 (चन्द्रिका) तथा ऊचे पर्वतीय क्षेत्रों मे एच.पीडब्ल्यू. 42 (अराधना) का विकल्प है। यह किस्म सिंचित परिस्थितियों में 37—40 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तथा बारानी क्षेत्रों में 25—30 क्विटल प्रति हैक्टेयर के लगभग औसत पैदावार देती है।

एच.पी.डब्ल्यू. 236

यह किस्म हालांकि ऊचे पर्वतीय क्षेत्रों में असिंचित भूमि पर समय पर बिजाई के लिए अनुमोदित की गई है, फिर भी यह किस्म मध्यवर्ती एवं निचले क्षेत्रों में भी बहुत अच्छी पैदावार देने में सक्षम है। यह किस्म करनाल बंट, पीला रतुआ तथा भूरा रतुआ रोगों के लिए प्रतिरोधी है। इसके दाने शरबती, मोटे तथा अर्ध कठोर होते हैं। ऊचे पर्वतीय क्षेत्रो में यह किस्म एच.एस. 365, एच.पी.डब्ल्यू. 155 (ओंकार) एवं वी.एल. 832 का विकल्प है। यह किस्म बारानी क्षेत्रों में 33 क्विंटल प्रति हैक्टेयर के लगभग औसत उपज देती है।

हिम प्रथम (डी.एच. 114)

यह शीतकालीन गेहूँ की जैव प्रौद्योगिकी विधि द्वारा तैयार की गई देश की प्रथम डब्ल हैप्लॉयड किस्म है। यह किस्म 37—40 क्विंटल/है. पैदावार देती है और शुष्क सम—शीतोष्ण क्षेत्रों जैसे कि लाहौल व स्पिति, किन्नौर तथा चंबा के पाँगी के लिए उपयुक्त हैं। इसके दाने आकार में बड़े, ठोस एवं सुनहरे रंग के हैं इसके दानों में 12.79 प्रतिशत प्रोटीन व 7.81 प्रतिशत ग्लूटन की मात्रा पाई जाती है। यह किस्म पील व भूरे रतुए व चूर्ण लासिता बिमारियों के लिए रोग प्रतिरोधी है। यह जल्दी पकने वाली मध्यम बौनी किस्म है और इसे अक्तूबर—नवम्बर या बर्फ गिरने से लगभग एक माह पहले बीजाई करना आवश्यक है। क्योंकि इस किस्म को अत्याधिक ठण्डे तापमान की जरूरत बहुत कम समय के लिए चाहिए, इसलिए इसे वातावरण में बदलाव से प्रभावित क्षेत्रों में जहाँ अब बहुत ही कम बर्फ गिरती है, में भी सफलतापूर्वक लगाया जा सकता है। इस किस्म का अनुमोदन शीतकालीन गेहूँ सप्तधारा के विकल्प व किसानों द्वारा लगाई जाने वाली अपनी परम्परागत किस्मों के बदलाव के रूप में हिमाचल प्रदेश के शुष्क सम—शीतोष्ण क्षेत्रों हेतू किया गया है।

एच.एस. 542 (पूसा किरण)

इस किस्म को प्रदेश के उतर पर्वतीय क्षेत्रों में अगेती बिजाई के लिए अनुमोदित किया गया है। मक्की की फसल की कटाई के बाद भूमि में बनी नमी का सदुपयोग करने के लिए यह एक उपयुक्त किस्म है, जिसे मध्य अक्तूबर तक बीज देना चाहिए। यह भूरेरतुए के लिए प्रतिरोधी तथा पीले रतुए को

सहन करने की क्षमता रखती है। इसके दाने शरवती व अर्ध कठोर होते हैं। चपाती के लिए उत्तम किस्म है। औसत उपज 28–33 किंवटल/हैक्टेयर है।

सप्तधारा

यह मध्यम ऊँचाई की बालों रहित किस्म है। जिसमें अधिक दौजियां निकलती हैं और पौधों पर गुच्छे की तरह बालियां होती हैं। इसके दाने ठोस व सघन होते हैं। यह किस्म पीले व भूरे रतुए व चूर्णिल आसिता बिमारियों के लिए रोग–प्रतिरोधी है। यदि बर्फ गिरने से पूर्व पशु इसे खेत से खा जायें तो भी इसकी बढ़वार बहुत अच्छी होती है। इसके अतिरिक्त मई के अन्त में इससे हरे चारे की एक कटाई ली जा सकती है। इसकी औसतन उपज 44 क्विंटल/हैक्टेयर है, यदि मई महीने में हरा चारा न लिया हो अन्यथा दानों की औसतन उपज 37 क्विंटल/हैक्टेयर तथा हरे चारे की 70 क्विंटल/हैक्टेयर है।

हिम पालम गेहूं–1 (एच.पी.डब्ल्यू. 360)

यह मध्यम ऊँचाई की अधिक उपज देने वाली किस्म है जिसे असिंचित भूमि में अगेती बिजाई के लिए निचले व मध्यवर्ती क्षेत्रों के लिए अनुमोदित किया गया है। यह किस्म पीले व भूरे रतुए तथा खुली कंगियारी के लिए प्रतिरोधी है। इसके दाने अर्ध कठोर एवं मध्यम मोटे होते हैं तथा चपाती अच्छी बनती है। बारानी क्षेत्रों में इसकी औसत उपज 25 से 33 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म वी. एल. 829 व एच. एस. 542 की विकल्प है।

हिम पालम गेहूं–2 (एच.पी.डब्ल्यू. 368)

यह किस्म सिंचित व बारानी भूमि में समय से बिजाई के लिए निचले व मध्यवर्ती क्षेत्रों के लिए अनुमोदित की गयी है। यह रतुआ रोग प्रतिरोधी किस्म है। पौधे मध्यम ऊँचाई के, दाने मोटे, अर्ध–कठोर होते हैं। इसकी चपाती अच्छी बनती है। बारानी क्षेत्र में इसकी औसत उपज 26–31 क्विंटल/हैक्टेयर तथा सिंचित अवस्था में 40–45 क्विंटल/हैक्टेयर है।

केन्द्रीय गेहूँ एच.एस. 562

केन्द्रीय गेहूँ एच.एस. 562 को फसल मानकों पर केन्द्रीय उप–समिति द्वारा पहाड़ी राज्यों जैसे हिमाचल प्रदेश, उतराखण्ड, जम्मू और कश्मीर और उतर पूर्वी पहाड़ी राज्यों में समय पर बिजाई के लिए अधिसूचित किया गया है। यह किस्म बारानी एवं सिंचित, दोनों ही परिस्थितियों के लिए उपयुक्त है। यह किस्म बारानी क्षेत्रों में क्रमशः 36 क्विंटल/हैक्टेयर व सिंचित क्षेत्रों में 52 क्विटल/हैक्टेयर के लगभग उपज देने की क्षमता रखती है। इस किस्म की बिजाई का उपयुक्त समय बारानी परिस्थितियों में 15–17 अक्टूबर और सिंचित परिस्थितियों में 1–15 नवंबर है। यह किस्म पीला एवं भूरा रतुआ बिमारियों के लिए प्रतिरोधी है। इस किस्म में अच्छी चपाती और रोटी बनाने के गुण हैं। यह किस्म लोहा (38.4 पीपीएम) और जिंक (34.5 पीपीएम) जैसी सूक्ष्म पोषक तत्वों में भी समृद्व है।

एच.पी.डब्लयू. 249 (अस्मि)

इस किस्म का अनुमोदन प्रदेश के मध्यवर्ती क्षेत्रों में सिंचित एवं असिंचित दशा में समय पर

बिजाई के लिए किया गया है। इस किस्म में पीले व भूरे रतुए, खुली कंगियारी एवं चूर्णलासिता रोगों के लिए प्रतिरोधकता पाई गई है। मध्यवर्ती क्षेत्रों में यह किस्म एच. एस. 240, वी.एल. 804 एवं वी.एल. 738 के स्थान पर लगाने के लिए अच्छा विकल्प है। यह बारानी एवं सिंचित क्षेत्रों में क्रमशः 25–26 क्विंटल व 48–49 क्विंटल प्रति हैक्टेयर के लगभग औसत उपज देने की क्षमता रखती है।

एच.पी.डब्लयू. 349

गेहूँ की नई अधिक उपज देने वाली किस्म है जो पीला एवं भूरा रतुआ बिमारियों के लिए प्रतिरोधी है। इस किस्म को उत्तर भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में समय पर बुआई के लिए अनुमोदित किया गया है। यह किस्म सिंचित एवं बारानी दोनों ही परिस्थितियों के लिए उपयुक्त पाई गई है। यह सिंचित व बारानी क्षेत्रों में क्रमशः 45–48 क्विंटल प्रति हैक्टेयर व 22–29 क्विंटल प्रति हैक्टेयर के लगभग उपज देने की क्षमता रखती है। इस किस्म के दाने आकार में बड़े ठोस व सुनहरे रंग के हैं तथा चपाती व ब्रैड बनाने के लिए बहुत अच्छी है। इस किस्म की पोषक क्षमता अन्य किस्मों की तुलना में अधिक है क्योंकि इसमें लोह व मैंगनीज खनिज दूसरी किस्मों से अधिक मात्रा में हैं। इस किस्म की पहचान फसल की बढ़ौतरी वाली अवस्था में इसकी पत्तियों के सिरों पर आने वाले पीलेपन से की जा सकती है। यह किस्म गेहूँ की एच. एस. 507 तथा बी. एल. 907 का विकल्प है।

वी.एल.डब्ल्यू. 907

यह नई किस्म प्रदेश के निचले तथा मध्यवर्ती पर्वतीय क्षेत्रों में सिंचित एवं असिंचित भूमि में समय पर बिजाई के लिए उपयुक्त पाई गई है। यह किस्म पीले एवं भूरे रतुए के लिए रोग–प्रतिरोधी है। यह एक मध्यम ऊंचाई वाली शरबती एवं कठोर दानों वाली किस्म है, जिससे बहुत अच्छी चपाती बनती है। यह किस्म 165 से 180 दिनों में (सिंचित एवं असिंचित क्षेत्रों) में पक कर तैयार हो जाती है। यह बारानी एवं सिंचित क्षेत्रों में क्रमशः 25–28 क्विंटल व 40–50 क्विंटल प्रति हैक्टेयर औसत उपज देने की क्षमता रखती है।

एच.एस. 507 (पूसा सुकेती)

यह नई किस्म प्रदेश के निचले एवं मध्यवर्ती क्षेत्रों में सिंचित एवं असिंचित भूमि में समय पर बिजाई के लिए उपयुक्त है। यह किस्म पीले व भूरे रतुए तथा पत्ता झुलसा एवं करनाल बंट रोगों के लिए प्रतिरोधक है। इसके दाने शरबती, अर्ध कठोर एवं मध्यम मोटे होते हैं। यह किस्म वी.एल. 907 के लिए एक अच्छा विकल्प है। यह किस्म 165 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है। यह बारानी एवं सिंचित क्षेत्रों में क्रमशः 25 क्विंटल व 47 क्विंटल प्रति हैक्टेयर के लगभग औसत उपज देती है।

वी.एल.डब्ल्यू. 892

यह नई किस्म प्रदेश के निचले एवं मध्यवर्ती क्षेत्रों में सीमित सिंचाई की दशा में पछेती बिजाई के लिए अनुमोदित की गई है। यह मध्यम ऊँचाई वाली किस्म है जो 140–145 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है। यह पीले एवं भूरे रतुए के लिए रोग–प्रतिरोधी किस्म है। इसके दाने शरबती व कठोर होते हैं,

जिससे अच्छी चपाती बनती है। यह किस्म सोनालिका व एच.एस. 295 के स्थान पर लगाने और एच.पी. डब्ल्यू. 42 (अराधना) व एच.एस.–420 (शिवालिक) के लिए बहुत अच्छा विकल्प है। इस किस्म की औसत उपज 30–35 क्विंटल प्रति हैक्टेयर के लगभग है।

एच.एस. 490 (पूसा बेकर)

यह नई किस्म निचले व मध्यवर्ती पर्वतीय क्षेत्रों में सीमित सिंचाई की दशा में पछेती बिजाई के लिए अनुमोदित की गई है। यह एक मध्यम ऊंचाई वाली किस्म है जिसके दाने मोटे, सफेद शरबती एवं अर्ध कठोर होते हैं। इस किस्म में बहुत ऊंचे स्तर पर बिस्कुट बनाने की क्वालिटी है। यह किस्म 150 दिनों में पक पर तैयार हो जाती है। यह किस्म सभी रतुआ रोगों के लिए प्रतिरोधक है। यह किस्म सोनालिका (एस. 308) एच.एस. 295 एवं एच.एस. 420 (शिवालिक) के स्थान पर लगाने के लिए उपयुक्त है। इसकी औसत उपज लगभग 30 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

भूमि :

गेहूं विभिन्न प्रकार की भूमि में उगाई जाती है। अच्छे जल निकास वाली मध्यम दोमट भूमि इसकी खेती के लिए उपयुक्त है।

भूमि की तैयारी :

एक गहरा हल चलाने के बाद देसी हल से 1–2 जुताईयां करें ताकि खेत अच्छी तरह से तैयार हो जाए। यदि धान के बाद गेहूं की खेती करनी हो तो एक और जुताई करनी चाहिए। मिट्टी के ढेलों को अधिक से अधिक तोड़ देना चाहिए।

बिजाई का समय:

अच्छी पैदावार लेने के लिए गेहूँ की बिजाई सही समय पर करनी चाहिए। प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में बिजाई का समय निम्नलिखित हैः–

क्षेत्र	**सिंचित**	**असिंचित**
(क) समय से बिजाई		
निचले पर्वतीय क्षेत्र	अक्तूबर के अंतिम सप्ताह–15 नवम्बर	अक्तूबर के अंतिम सप्ताह–15 नवम्बर
मध्यवर्ती पर्वतीय क्षेत्र	यथोपरि	यथोपरि
ऊंचे पर्वतीय क्षेत्र	1 अक्तूबर से 15 अक्तूबर	1 अक्तूबर से 15 अक्तूबर
(ख) पछेती बिजाई		
निचले पर्वतीय क्षेत्र	दिसम्बर के अन्त तक	वर्षा पर निर्धारित परंतु दिसंबर के अंत तक
मध्यवर्ती पर्वतीय क्षेत्र	यथोपरि	यथोपरि
ऊंचे पर्वतीय क्षेत्र	1 अक्तूबर तक	15 अक्तूबर तक

यदि देरी से बिजाई की जाये तो उत्पादन में कमी आती है।

आकस्मिक फसल प्रणाली :

यदि कुल्लू घाटी (खण्ड–2) में सर्दियों की बारिश आने में बहुत देरी हो जाये तो गेहूं (वी. एल–892) और गोभी–सरसों (किस्म शीतल) की बिजाई सबसे लाभदायक रहती है। उसके बाद गेहूं (एच.एस–490) की बिजाई जनवरी के पहले पखवाड़े तक कर लेनी चाहिए और ऐसी स्थिति में बारानी खेती के लिए दी गई नाईट्रोजन की मात्रा की 25 प्रतिशत अधिक मात्रा इन फसलों को देनी चाहिए। ऐसी परिस्थितियों में मसर (किस्म विपाशा), सरसों (किस्म एच.पी बी.एस.–1) या राया (किस्म–वरूणा) को क्रमशः लगाना चाहिए।

बिजाई का ढंग :

किसान प्रायः छट्टा देकर बीज बोते हैं परंतु इससे खरपतवार निकालने में कठिनाई होती है और पैदावार भी कम होती है। इसलिए गेहूँ को 22 सैं.मी. दूरी की कतारों में ही बोना चाहिए। बीज को 5 सैं.मी. से अधिक गहरा नहीं डालना चाहिए।

बीज की मात्राः

सही समय की बिजाई के लिए 100 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर पर्याप्त है लेकिन बारानी क्षेत्रों में 20 दिसंबर के बाद बिजाई के लिए 150 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर उपयुक्त होता है।

क्षेत्र	**तत्व (कि.ग्रा / है.)***			**उर्वरक (कि.ग्रा / है.)**			
	ना.	फा.	पो.	यूरिया	डीएपी**	या एसएसपी	एमओपी
सिंचित	120	60	30	260	130	375	50
असिंचित	80	40	40	175	85	250	65
				उर्वरक (कि.ग्रा / बीघा)			
सिंचित					10	30	4
असिंचित					7	20	5

*इन तत्वों को अन्य उर्वरकों द्वारा भी दिया जा सकता है जो बाजार में उपलब्ध हों।

**सिंचित क्षेत्रों के अंतर्गत जब 130 कि.ग्रा. डीएपी प्रयोग किया गया हो तो यूरिया 50 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर कम देनी चाहिए। इसी प्रकार असिंचित क्षेत्रों के अंतर्गत जब 85 कि.ग्रा. डीएपी प्रयोग किया गया हो तो यूरिया 30 कि. ग्रा. या किसान खाद 60 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर कम देनी चाहिए।

नोट :

1. यदि बारानी क्षेत्रों मे गेहूं की बिजाई 20 दिसंबर के बाद की हो तो बिजाई के तुरंत बाद गोबर की खाद 15 टन / हैक्टेयर की दर से भूमि की सतह पर बिखेर देनी चाहिए। गोबर की खाद को मिट्टी में न मिलाएं।

2. यदि किसान अधिक खाद देने की क्षमता रखतें हों तो मक्की–गेहूं/धान–गेहूं की फसल प्रणाली में गेहूं की फसल को सिंचित क्षेत्रों में उर्वरकों की मात्रा को 50 प्रतिशत अधिक दें व साथ में 10–12 टन देसी खाद/हैक्टेयर डालें जिससे गेहूं की 50 क्विंटल/हैक्टेयर उपज लगातार प्राप्त की जा सकती है।

खाद देने का समय व ढंग :

सिंचित क्षेत्रों में फास्फोरस व पोटाश की सारी मात्रा और नाईट्रोजन की आधी मात्रा बिजाई के समय पोरा विधि से खेत में डालनी चाहिए। नाईट्रोजन की शेष आधी मात्रा पौधे की मूसल जड़ें निकलने की अवस्था में डालनी चाहिए। नाईट्रोजन की प्राप्ति के लिए यूरिया का प्रयोग करना चाहिए जिसे सिंचाई या वर्षा के बाद खेत में डालना चाहिए।

असिंचित या बारानी क्षेत्रों में नाईट्रोजन की पहली मात्रा बिजाई के समय पोरा विधि से देनी चाहिए और बाकी आधी मात्रा पहली बारिश होने पर देनी चाहिए।

सुपरफास्फेट के बंधे हुए संचय के कारण तेजाबी भूमि (पी. एच. 6 से नीचे) में गेहूं की फास्फोरस की जरूरत को पीसे हुए रॉक फास्फेट से भी प्राप्त किया जा सकता है। 225 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति हैक्टेयर प्राप्ति के लिए 1125 कि.ग्रा. रॉक फास्फेट (20% फास्फोरस) चाहिए। इसे बिजाई के 15 दिन पहले खेत में डालें और अच्छी तरह से मिट्टी में मिला दें। जब रॉक फास्फेट का प्रयोग किया हो तो अगली फसल में फास्फोरस डालने की जरूरत नहीं होती है। नाईट्रोफास्फेट को (30–50% पानी घुलनशील फास्फोरस) भी तेजाबी भूमि में सुपरफास्फेट के स्थान पर प्रयोग किया जा सकता है।

उर्वरकों की मात्रा केवल भूमि की सामान्य उपजाऊ शक्ति के आधार पर दी गई है। अधिक पैदावार लेने के लिए खेत की मिट्टी का परीक्षण कराना चाहिए, ताकि उर्वरकों की सही मात्रा फसल में डाली जाए। यदि गेहूं की फसल में गोबर की खाद डाली हो तो उर्वरकों की मात्रा आवश्यकतानुसार डालें। यदि भूमि तेजाबी हो तो उसमें एक टन चूना प्रति हैक्टेयर बिजाई के 20 दिन पहले मिट्टी में मिलाएं परंतु मिट्टी को चूने की आवश्यकता के लिए परीक्षण करवाना चाहिए और इसका प्रयोग 2–3 साल के लिए पर्याप्त होता है। गेहूं की फसल के लिए निश्चित उपज प्रणाली अपनाएं।

जस्ता (जिंक) की कमी प्रायः रेतीली भूमियों में होती है। अतः जिंक सल्फेट 25 किग्रा/हैक्टेयर की दर से बिजाई के 15 दिन पहले उन भूमियों में डालें जहां जस्ता की कमी हो।

सिंचाई एवं जल प्रबन्धः

पानी की उपलब्धता के आधार पर गेहूं की अच्छी उपज लेने के लिए निम्नलिखित सिंचाई की व्यवस्था करनी चाहिए–

गेहूं की फसल में जो संभव सिंचाईयां दी जा सकें	फसल की बढ़ौतरी की विभिन्न अवस्थाएं जब सिंचाई देनी चाहिए				
	मूसल जड़ें निकलने पर	दौजियां निकलने की अंतिम अवस्था पर	गांठ बनने की अंतिम अवस्था पर	फूल आने की अंतिम अवस्था पर	दानो में दूध पड़ने पर
एक	+				
दो	+			+	
तीन	+		+	+	
चार	+	+	+	+	
पांच	+	+	+	+	+

+ जब सिंचाई देनी हो।

यदि सिंचाई की और व्यवस्था हो तो बिजाई से पहले सिंचाई करनी चाहिए या बिजाई के 30–40 दिन के बाद सिंचाई देनी चाहिए।

अतिरिक्त फसल प्रणाली:

गेहूं को प्रायः मक्की/धान की फसल प्रणाली के साथ लगाया जाता है। परंतु सिंचित अवस्थाओं में धान–मूली–आलू, मक्की–मूली–प्याज, मक्की–तोरिया–आलू और मक्की–तोरिया+गोभी सरसों फसल चक्र अधिक आय देने वाले है। असिंचित अवस्थाओं में मक्की–तोरिया+गोभी सरसों, मक्की–चना और मक्की+रौंगी–गेहूं फसल प्रणालियां, मक्की–गेहूं फसल चक्र से अधिक लाभदायक हैं। खंड–1 के असिंचित क्षेत्रों में अरहर (सरिता)–गेहूं (एच.एस.–490) फसल चक्र मक्की–गेहूं फसल चक्र से अधिक लाभदायक है।

घास पत्तियों का प्रयोग (केवल पालमपुर की स्थिति में):

यदि गेहूं की देरी से बिजाई की गई हो तो चील की पत्तियों या किसी अन्य किस्म की पत्तियों को 8 टन/हैक्टेयर के अनुसार खेत में बिछा दें। इसके दो लाभ हैं– एक तो यह भूमि में नमी का संरक्षण करती है और दूसरा, सर्दी के मौसम की ठंडी रातों में भूमि में तापमान बनाए रखती है जो फसल के जल्दी उगने में सहायक होती है। इस विधि को पालमपुर की स्थितियों में अपनाना चाहिए जहां चील या अन्य किस्म की पत्तियां उपलब्ध हैं।

खरपतवारों की रोकथाम :

हाथ द्वारा निकालना :

यदि पर्याप्त श्रमिक उपलब्ध हों तो एक निराई–गुडाई फसल उगने के एक महीने बाद करने से खरपतवारों के नियंत्रण के साथ–साथ बारानी खेती में नमी संरक्षण में सहायक सिद्व होती है।

रासायनिक रोकथाम :

गेहूं में घास जैसे खरपतवारों के नियंत्रण के लिए आईसोप्रोटूरान (1250 ग्रा./है.) का प्रयोग करें। आईसोप्रोटूरान विभिन्न व्यापारिक नामों से उपलब्ध है। इसे निम्नलिखित रसायनों तथा दी गई मात्रा के अनुसार प्रयोग करना चाहिए। एरीलॉन/मासलान/हिम एग्रीलान (75%)–1700 ग्रा. प्रति हैक्टेयर। इसके अतिरिक्त क्लोडीनाफाप–प्रोपार्जिल 15 डब्लयू. पी. 60 ग्रा. पति हैक्टेयर (टॉप–आर या टोपिक) की दर से गेहूं में खरपतवार नियंत्रण के लिये प्रयोग किया जा सकता है। खरपतवारों के उगने के बाद रसायनों को उस समय प्रयोग करें जब उन पर 2–3 पत्तियां हों, तो खरपतवारों की अच्छी रोकथाम हो जाती है। निचले पर्वतीय क्षेत्रों में यह अवस्था 30–35 दिनों के बाद और मध्यवर्ती क्षेत्रों में 40–45 दिनों के बाद समय पर की गई बिजाई वाली फसल में आती है। हल्की भूमि में उपरोक्त खरपतवारनाशियों की मात्रा 20% कम कर दें। जहां जंगली जई की समस्या हो तो इस रसायन का बिजाई के 20 दिन बाद छिडकाव करें। उब्बन घास के नियन्त्रण के लिए आइसोप्रोटूरान रसायन की मात्रा 20% कम करके तथा 0.5% सेल्बट/टीपोल/सेन्डोविट स्टिकर मिला कर छिडकाव करें। यदि किसान खरपतवार नाशी के साथ स्टिकर का प्रयोग न कर रहें हो तो रसायन की पूरी मात्रा डालनी होगी।

यदि घास व चौड़ी पत्तियों वाले दोनों खरपतवारों की समस्या हो तो कलोडिनाफाम 60 ग्रा. /मेट सलफयूरान मिथाइल 4 ग्रा. को फसल में 30–35 दिनो में डालें।

गेहूं की बिजाई 15 सैं.मी. दूरी की पंक्तियों या 22 सैं.मी. पर एक से दूसरी दिशा में बिजाई की हो और आधा–आधा बीज और उर्वरक दोनों दिशाओं में डाला हो तो गुल्ली डंडा व जंगली जई खरपतवारों की संख्या कम होती है ऐसी स्थिति में आइसोप्रोटुरान की आधी मात्रा के प्रयोग करने से उपर्युक्त खरपतवारों की रोकथाम की जा सकती है परंतु इन्हे बिजाई के 15 दिनों के बाद प्रयोग करना चाहिए। जिन खेतों में उब्बण खरपतवार की समस्या हो वहां पर खरपतवारनाशी की पूरी मात्रा ही प्रयोग करें।

सावधानियां :

1 खरपतवारनाशकों का प्रयोग गेहूं में उस समय न करें जब कोई चौड़े पत्ते वाली फसल की बिजाई साथ में की हो।

2 छिडकाव करते समय चौडे फव्वारे वाली नॉजल का प्रयोग करें।

पौध संरक्षण :

आक्रमण/लक्षण	**रोकथाम**
(1) कीट	
दीमक : निचले पर्वतीय क्षेत्रों के असिंचित इलाकों में अंकुरित पौधों को क्षति पहुंचाती है।	1. बीज का क्लोरपाईरीफॉस 20 ई.सी. (4 मि.ली. /कि.ग्रा. बीज) से उपचार करें 2. दो लीटर क्लोरपाईरीफॉस 20 ई.सी. को 25 कि.ग्रा. रेत में मिलाकर प्रति हैक्टेयर बिजाई के समय खेत में डालें।

	3. बिजाई करने से पहले पिछली फसल के अवशेषों को इक्ट्ठा करके नष्ट कर दें। 4. खेतों के नजदीक दीमक की बामी (मॉउँड) को रानी सहित नष्ट करें।
टिड्डे : अंकुरित फसल के पौधों को नष्ट कर हानि पहुंचाते हैं। कई बार घाटी व निचले पर्वतीय क्षेत्रों में बहुत हानि पहुंचाते हैं।	1. फोलीडॉल 2% धूल 25 कि.ग्रा./है. छिड़कें। 2. क्योंकि टिड्डे निकटवर्ती खेतों व मेढ़ों से जहां घास उग रही होती है वहां से गेहूं व जौ की फसल में आते हैं अतः इन स्थानों पर भी उपचार करें।
आर्मीवर्म : फसल के कोमल पत्तों को खाती है और एक खेत से दूसरे खेत को तबाह करके बढ़ती जाती है।	सुंडियों को इक्ट्ठा करके नष्ट कर दें।
गेहूं का तेला : यह कीट पत्तों से रस चूसकर हानि पहुंचाता है। जिसके फलस्वरूप दाने बनने में बाधक सिद्व होता है।	50 ग्राम थायामिथोक्सेम 25 डब्ल्यू जी. 500 लीटर पानी में या 500 मि.ली. क्वीनलफॉस 25 ई.सी. प्रति 500 लीटर पानी में घोलकर छिडकाव करें।
(2) बिमारियां :	
पीला रतुआ : पत्तों और उनके आवरणों पर छोटे–छोटे पीले फफोले कतारों में शिराओं के मध्य प्रकट होते हैं। रोग का प्रकोप अधिक होने पर पौधों को हाथ से छूने पर धारियों से फफूंद के बीजाणु पीले रंग की तरह हाथ में लगते हैं। तापमान में वृद्वि के साथ यह धारियां काली बनना शुरू हो जाती हैं।	1. रोग प्रतिरोधि किस्में जैसे एच.पी.डब्ल्यू. 360, 368, 349, एच.एस. 562, एच.एस. 542 इत्यादि प्रयोग करें। 2–3 वर्ष बाद इनकी जगह नई अनुमोदित रोग प्रतिरोधी किस्मों को लगाएं। 2. फसल में बीमारी का पहला लक्षण प्रकट होते ही प्रापिकोनाजोल 25 ई.सी. (शाईन/टिल्ट 0.1%) या मैन्कोजेब 75 डब्ल्यू.पी. (ईन्डोफिल एम–45. 0.2%) का 15 दिन के अन्तर पर छिडकाव करें ।
भूरा रतुआ : गोल व भूरे रंग के बिखरे हुए कील पत्तो पर प्रकट होते हैं।	उपरोक्त
काला रतुआ : गहरे भूरे रंग की कीलें, तने, पत्तों और पत्तों के आवरणों पर दिखाई देती हैं जो बाद में फट जाती हैं।	उपरोक्त, अनुमोदित किस्में लगाएं।

खुली कंगियारी : इस रोग से प्रभावित पौधे काली बालियां पैदा करते हैं जिनमें फफूंद के बीजाणु पाए जाते हैं। बाद में काले बीजाणु हवा से उड़ जाते हैं और केवल फूल वाली डाली रह जाती है।	1. रोग प्रतिरोधि किस्में लगाएं। 2. बीज को प्रोपीकोनाजोल 25 ई.सी. (टिल्ट 0.01) के घोल में 6 घंटे के लिए भिगोएं और फिर छाया में सुखाकर बिजाई करें या बीज का वीटावैक्स / बैवीस्टीन (2.5 ग्रा. / कि.ग्रा.बीज) या रेक्सिल (1 ग्राम / कि.ग्रा. बीज) से उपचार करें। 3. रोग ग्रस्त पौधों को बिमारी के लक्षण प्रकट होते ही निकाल कर जला दें या खेत के बाहर जमीन में दबा दें। **नोट :** बीज का उपचार बिजाई के समय ही करें।
हिल बन्ट : प्रभावित बालियों में दाने पूरी तरह पकने पर चिपचिपे बीजाणु समूह से भरकर सड़ी मछली जैसी तीव्र गंध देते हैं परंतु इनके दानों के आवरणों पर कोई प्रभाव नहीं होता है।	बीज का वीटावैक्स (2.5 ग्राम / कि.ग्रा. बीज) से उपचार करें।
पत्तों पर कंगियारी : पत्तों पर लम्बी काली धारियां शिराओं के समानान्तर बनती हैं। ये धारियां बाद में फटकर काला चूर्ण (बीजाणु समूह) पदार्थ बाहर निकालती हैं। पौधे छोटे रह जाते हैं और रोग–ग्रस्त पत्तों का गिरना प्रमुख लक्षण है।	1. बीज का (कार्बन्डाजिम / बिनोमाईल) बैवीस्टीन / बेनलेट (2.5 ग्रा. / कि.ग्रा. बीज) से उपचार करें। 2. देरी से बिजाई न करें। 3. जिन खेतों में बिमारी का प्रकोप होता है, वहां बिजाई के तुरंत बाद सिंचाई करें। 4. रोग ग्रस्त पौधों को निकाल कर जला दें।
चूर्णलासिता रोग : रोग से प्रभावित पौधों पर फफूंद की सफेद से मटमैली रूई की हल्की तह नजर आती है।	फसल पर कार्वेडाजिम (0.05%) का छिड़काव 15 दिन के अन्तर पर करें।
करनाल बन्ट : पौधे की किसी बाली के किन्हीं–किन्हीं दानों पर इस बिमारी का प्रकोप होता है। रोग ग्रस्त दाने आंशिक रूप से काले चूर्ण में बदल जाते हैं।	1. अनुमोदित किस्में लगाएं। 2. बीज का (कार्बन्डाजिम) (2.5 ग्रा. / कि. ग्रा. बीज) से उपचार करें। 3. प्रोपीकोनाजोल 25 ई.सी. (टिल्ट 0.1%) का फसल में पहला छिडकाव फलैग पत्ते की अवस्था में तथा दूसरा छिड़काव पौधों में 50 प्रतिशत बालियों निकलते समय करें (पहले छिड़काव के 10–12 दिन पश्चात)। टिल्ट का छिड़काव केवल बीज फसल के लिये करें। **नोट :** यह देखा गया है कि फफूंदनाशक रसायनों का कीटनाशक रसायनों के मुकाबले

	में अवशेष जहरीलापन नहीं रहता। अगर फसल बीज के लिये फेल होती है तो उस फसल को किसान खाने के लिये उपयोग कर सकता है।
इयर कॉकल और पीली सड़नः रोगग्रस्त बालियों में दाने नहीं बनते और वह मुड़ जाती हैं। और इन पर पीला चिपचिपा पदार्थ होता है। बाद में बालियों पर गहरे रंग के बिजाणुओं से परिपूर्ण गुब्बारे लगे रहते हैं।	1. रोगग्रस्त पौधों को निकाल कर नष्ट कर दें। 2. बीजों को 5% नमक के घोल में डालकर तैरते हुए बीजों को निकाल कर नष्ट कर दें।

जौं

हिमाचल प्रदेश में क्षेत्रफल तथा उपज की दृष्टि से गेहूं के बाद जौं रबी की दूसरी महत्वपूर्ण अन्न की फसल है। हिमाचल प्रदेश में 2017–18 में 19.2 हजार हैक्टेयर भूमि पर जौ की खेती की गई जिसमें 33.9 हजार टन उत्पादन हुआ। प्रदेश में जौ की उपज लगभग 17.70 क्विंटल/हैक्टेयर रही जो मुख्यतः सीमांत भूमियों की फसल है तथा उन क्षेत्रों में उगाई जाती है जहां गेहूं देरी से पकती है। जिसके कारण एक वर्ष में दो फसलें नहीं ली जा सकती हैं। यही कारण है कि जौ ऊंचे क्षेत्रों तथा ऊंचे शुष्क समशीतोष्ण खण्डों में बारानी परिस्थितियों की मुख्य फसल है। इन क्षेत्रों के लोग जौ को अपना भोजन, पशुओं के लिए चारे तथा स्थानीय मदिराएं बनाने के लिए प्रयोग करते हैं।

लाहौल–स्पिति, किन्नौर तथा चम्बा के पांगी व भरमौर वाले क्षेत्रों में नंगे जौं की खेती की जाती है जबकि दूसरे जिलों में जौं की तूषित किस्में लगाई जाती है।

अनुमोदित किस्में

एच.बी.एल.–276 (हरित)

यह छः कतारों वाली, अधिक दौजियां निकालने वाली, अर्धबौनी, रोग प्रतिरोधी, डोलमा से अधिक उपज देने वाली तुषार रहित (नंगी) नई किस्म है। डोलमा किस्म की तरह इसके दाने बड़े तथा शरबती होते हैं। यह किस्म पीला रतुआ, खुली कांगियारी तथा सूखे मौसम के लिए पतिरोधी है। इस किस्म की सिफारिश मध्यम व ऊंचे क्षेत्रों में बारानी खेती के लिए की गई है। इसके अतिरिक्त यह किस्म क्षेत्र–4 (ऊंचे–पर्वतीय शुष्क शीतोषण खंड) में गर्मियों में उगाने के लिए उपयुक्त है। डोलमा की तुलना में इसकी बालियां घनी तथा बालियों में दानों की संख्या अधिक होती है। बारानी क्षेत्रों में इसकी औसत उपज 25–30 क्विंटल तथा लाहौल–स्पिति में 50 क्विंटल/हैक्टेयर है।

एच.बी.एल. 113 (विमल)

यह दो कतारों वाली तथा अधिक उपज देने वाली तूषित किस्म है। जिसे निचले तथा मध्यवर्ती पर्वतीय क्षेत्रों के लिए अनुमोदित किया गया है। यह पीला रतुआ बिमारी के लिए रोग प्रतिरोधी है। इसकी औसत उपज 25–30 क्विंटल/हैक्टेयर है।

एच.बी.एल. 713 (हिम पालम जौं–1)

यह छः कतारों वाली तुष रहित (नंगी) किस्म है जिसे निचले व मध्यवर्ती क्षेत्रों में बारानी व सिंचित भूमि के लिए अनुमोदित की गई है। इसमें दौजियां अधिक निकलती हैं। तथा यह पीला रतुआ रोग के लिए प्रतिरोधी किस्म है। यह 170–180 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। इसकी उपज लगभग 30–35 क्विंटल/हैक्टेयर है।

हिम पालम जौ–2 (HBL-804)

यह छः कतारों वाली द्विदेशीय तूषित किस्म है जिसे प्रदेश के निचले व मध्यम पर्वतीय क्षेत्रों के वारानी इलाकों में समय पर बीजाई के लिए अनुमोदित किया गया है। इसकी बालियाँ मध्यम लंबाई तथा लंबे शूक (कीह) युक्त हैं। इसके दाने मध्यम मोटे और पीले रंग के होते हैं। यह 130 से 135 दिन में तैयार हो जाती है। यह किस्म भूरे और पीला रतुआ रोग के लिए प्रतिरोधी है। यह किस्म बीजाई के 70–80 दिन के पश्चात 25–30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर चारा और पकने पर 20–25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर दानों की पैदावार देती है।

गोकुल (एच.बी.एल–391)

यह दो कतारों वाली तूषित किस्म है। यह किस्म सारे रतुआ रोगों के लिए प्रतिरोधी है जिसका अनुमोदन मध्यवर्ती पहाड़ी क्षेत्रों के लिए किया गया है। यह लगभग 170 दिन में तैयार हो जाती है। इसके दाने पीले रंग के होते हैं तथा उपज लगभग 30–32 क्विंटल/हैक्टेयर है।

पूसा लोसर (बी.एच.एस 380)

अनुशंसित संख्या (नोटिफिकेशन) (एस. ओ. 733 (अ) दिनांक 01.04.2010) यह छः कतारों वाली छिलका द्विउपयोगी (चारा व खाद्य) नई किस्म है, जिसे निचले, मध्यवर्ती व ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों के लिए अनुमोदित किया गया है। इसकी औसतन हरे चार की उपज 60 क्विंटल/हैक्टेयर है। इस प्रजाति में पर्वतीय क्षेत्रों के किसानों की हरे चारे व अनाज की जरूरतों को पूरा करने की क्षमता है। इसमें भूरे व पीले रतुए के लिए रोगरोधिता के साथ–साथ झुलसा व चूर्णी फफूंद को सहन करने की भी क्षमता है।

पूसा भीतल (बी.एच.एस 400)

अनुशंसित क्रमांकः (नोटिफिकेशन) (का. आ. 1919 (अ) दिनांक 31.07.2014): यह छः कतारों वाली छिलका रहित जौ की नई किस्म है, जिसे निचले, मध्यवर्ती व ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों के लिए अनुमोदित

किया गया है। इसकी औसत उपज 32.7 क्विंटल/हैक्टेयर है। यह किस्म पीले रतुऐ को सहन करने की क्षमता रखती है।

भूमि :

अच्छे जल निकास वाली दोमट भूमि में जौं की अच्छी फसल होती है परंतु कमजोर रेतीली जमीनों में भी यह सफलता पूर्वक उगाया जा सकता है। बारानी क्षेत्रों में थोड़ी सी वर्षा में भी अच्छी फसल होती है। इसे तेजाबी भूमि में नहीं बोना चाहिए। यदि बिजाई करनी हो तो आवश्यकतानुसार चूने की मात्रा बिजाई से एक महीना पहले डाल लें।

भूमि की तैयारी :

जौं की बिजाई के लिए देसी हल से 2–3 जुताईयां करनी चाहिए।

बिजाई का समयः

जौं की बिजाई का सही समय अक्तूबर के अंतिम सप्ताह से नवंबर के प्रथम सप्ताह तक है। देरी से बिजाई करने पर उपज कम हो जाती है परंतु सूखे या कम वर्षा वाली परिस्थति में जौं की बिजाई दिसंबर के अंत तक की जा सकती है।

बिजाई का ढंग :

फसल की केरा प्रणाली से कतारों में 22 सै.मी. की दूरी पर बिजाई करें।

बीज की मात्रा :

100 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर पर्याप्त है। असिंचित व पछेती बिजाई की स्थिति में 20–25 कि. ग्रा. प्रति हैक्टेयर बीज अधिक डालना चाहिए। परंतु विमल किस्म में बीज की मात्रा 75 कि.ग्रा./है अर्थात है क्योंकि इसमें अधिक दौजियां निकलती हैं।

खाद व उर्वरक :

तत्व (कि.ग्रा./है.)			उर्वरक			
			(कि.ग्रा./है.)		(कि.ग्रा./बीघा)	
ना.	फा.	पो.	यूरिया	एसएसपी	यूरिया	एसएसपी
60	20	–	128	125	11	10

बिजाई के समय फास्फोरस की पूरी मात्रा व नाईट्रोजन की एक तिहाई मात्रा पोरा विधि से डालें और नाईट्रोजन का दूसरा एक तिहाई हिस्सा (बिजाई से 75 दिन बाद) एक दो सप्ताह के भीतर डालें तथा अंतिम एक तिहाई हिस्सा फसल में फूल आने की अवस्था में डालें।

जल प्रबन्ध :

हिमाचल के बारानी क्षेत्रों के लिए जौं एक उत्तम फसल है अतः जल प्रबंध के लिए कोई खास

सिफारिश नहीं है। परंतु यह आवश्यक है कि बिजाई के समय भूमि में पर्यात नमी होनी चाहिए ताकि बीज का सही अंकुरण हो सके। यदि सर्दी की बारिश न हो तब बिजाई के 3–4 सप्ताह बाद एक सिंचाई करें।

खरपतवारों की रोकथाम :

खरपतवारों के नियंत्रण के लिए दो बार हाथ से खरपतवार निकालें। एक उस समय जब फसल में 3–4 पत्ते हों और दूसरा उस समय जब सर्वाधिक दौजियां निकल रहीं हों। घास और चौड़े पत्तों के खरपतवारों की रोकथाम के लिए आईसोप्रोटुरान (750 ग्रा./है.) को 750 लीटर पानी में उस समय छिड़काव करें जब खरपतवार में 3–4 पत्ते हों। चौड़े पत्ते वाले खरपतवारों की रोकथाम के लिए 2,4–डी (सोडियम) 750 ग्रा./है. (फरनोक्सान या बथुआ पाऊडर) को बिजाई के 30–35 दिन के बाद प्रयोग करें। हाथ द्वारा खरपतवार नियंत्रण की तुलना में खरपतवारनाशियों से रोकथाम करना लाभदायक है।

कटाई :

जब फसल पक जाये तो दाने गिरने से बचाने के लिए तुरंत काट लेनी चाहिए। गहाई करने के बाद फसल को सुरक्षित स्थान में रख लें।

पौध संरक्षण :

आक्रमण/लक्षण	**रोकथाम**
(1) कीट	गेहूं की तरह
(2) बिमारियां :	
पीला रतुआ : पत्तों पर छोटे पीले कील एक धारी के रूप में प्रकट होते हैं।	अनुमोदित किस्में लगाएं
भूरा रतुआ : पत्तों पर छोटे भूरे कील प्रकट होते हैं।	अनुमोदित किस्में लगाएं
खुली कंगियारी : रोग से प्रभावित पौधों में काली बालियां निकलती हैं जिनमें फफूंद के विषाणु समूह पाये जाते हैं।	1. प्रभावित बालियों को प्रकट होते ही निकाल कर नष्ट कर दें। 2. बीज को वीटावैक्स/बैवीस्टीन (2.5 ग्रा./कि.ग्रा. बीज) से उपचार करें।
धारियों वाला रोग : पत्तों व उनके आवरणों पर पीले रंग की धारियां प्रकट होती हैं जो बाद में भूरे रंग में परिवर्तित हो जाती हैं जिसके कारण पत्ते सूख जाते हैं।	1. रोग–रहित बीज का प्रयोग करें। 2. बीज को वीटावैक्स +थीरम (1:1) 3 ग्रा./कि.ग्रा. से उपचार करें।
बंद कंगियारी : रोग से प्रभावित पौधों में दाने काले पाऊडर समूह में बदल जाते हैं परंतु खुली कंगियारी की तरह प्रकट नहीं होते क्योंकि अण्डाशय की दीवार व दाने का छिल्का इन्हें आपस में इक्ट्ठे रखते हैं।	बीज को वीटावैक्स (2.5 ग्रा./कि.ग्रा. बीज) से उपचार करें।

दलहनी फसलें

दलहन हमारे देश की खाद्य सामग्री में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। यह हमारी कृषि पद्यति में प्रमुख स्थान रखती हैं क्योंकि इनकी खेती में लागत थोड़ी आती है तथा यह भूमि को उपजाऊ करने की क्षमता भी रखती हैं व उन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त हैं जहां पर नमी की कमी होती है। हिमाचल प्रदेश में वर्ष 2017—18 में रबी दलहनी फसलों के अन्तर्गत 31.90 हजार हैक्टेयर क्षेत्रफल था जिसमें 37.40 हजार टन उत्पादन हुआ। दलहनी फसलों के कम उत्पादन के मुख्य कारण हैं

(1) अधिक उपज देने वाली रोग प्रतिरोधी किस्मों की कमी

(2) सीमांत भूमियों व कम नमी के अंतर्गत कुप्रबंध से खेती करना

(3) उर्वरकों व राईजोबियम परजीवी के प्रयोग की कमी तथा

(4) किसी भी प्रकार के पौध संरक्षण उपाय न अपनाना।

चना

यह प्रदेश में रबी की मुख्य दलहनी फसल है। वर्ष 2017—18 में इसे प्रदेश में 400 हैक्टेयर भूमि पर उगाया गया जिसमें कुल उत्पदान 400 टन व उपज 9.27 क्विंटल प्रति हैक्टेयर हुई।

अनुमोदित किस्में :

हिम पालम चना—1 (डी.के.जी. 986)

इस किस्म का अनुमोदन निचले व मध्य पर्वतीय क्षेत्रों के लिए किया गया है। इसके पौधे मध्यम फैलाव वाले हैं तथा शाखाएं लम्बी व फलियों से भरपूर होती है। दाने मध्यम आकार के व पीले भूरे रंग के होते हैं। यह किस्म 150—155 दिन में पककर तैयार हो जाती है। यह झुलसा रोग के लिए प्रतिरोधी तथा उखेड़ा, जड़ सड़न व ग्रे मोल्ड के लिए सहनशील है। औसत उपज 16—17 क्विंटल/हैक्टेयर है।

हिमाचल चना—2

इस किस्म का अनुमोदन समपर्वतीय व निचले पर्वतीय सम उष्णकटिबन्धी क्षेत्रों के लिए किया गया है। इसके पौधे मध्यम लम्बाई के (60—65 सैं.मी.), पत्तियां छोटी तथा फूल गुलाबी रंग के होते हैं। इसके दानें मध्यम आकार के व लाल भूरे रंग के होते हैं। यह किस्म उकठा रोग प्रतिरोधी है। यह किस्म 100—110 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है इसकी औसत उपज 10—12 क्विंटल/हैक्टेयर है।

एच.पी.जी.—17

यह प्रदेश के उन सभी स्थानों में उगाने के लिए उपयुक्त किस्म है जहां चना उगाया जाता है। यह मोटे बीजों वाली (22 ग्रा./100 बीज) किस्म है। यह झुलसा व उखेड़ा रोग के लिए अच्छी प्रतिरोधी है। यह मध्यम ऊँचाई की फैलने वाली किस्म है जो पत्तों के गुच्छों से परिपूर्ण होती है। इसकी उपज 13—15 क्विंटल/हैक्टेयर है।

जी.पी.एफ.–2

यह अधिक पैदावार देने वाली, झुलसा रोग प्रतिरोधी तथा समय पर बिजाई हेतु अनुमोदित किस्म है। यह किस्म 80 दिनों में पककर तैयार होती है और यह किस्म औसतन 16.7 क्विंटल/हैक्टेयर पैदावार देती है।

भूमि :

अच्छे जल निकास वाली दोमट तथा रेतीली दोमट भूमि चने की खेती के लिए उत्तम है।

भूमि की तैयारी :

गेहूं की तरह चने को बहुत अच्छी प्रकार तैयार किए गए खेत की जरूरत नहीं होती है। प्रायः 1–2 जुताईयां काफी होती हैं। जमीन थोड़ी भिकड़ों/ढेलों वाली होनी चाहिए ताकि जड़ों में हवा का अच्छी तरह प्रवेश हो सके।

बिजाई का समय :

चने की बिजाई का सामान्य समय मध्य अक्तूबर है। इससे उखेड़ा रोग की रोकथाम हो जाती है। अगेती बिजाई से फसल में उखेड़ा रोग लग जाता है, क्योंकि बिजाई के समय तापमान काफी अधिक होता है और पौधों की असाधारण वृद्धि हो जाती है, जिससे उपज में काफी कमी आती है। यदि चने की गेहूं या जौं के साथ मिश्रित खेती की जाए तो बिजाई का समय गेहूं या जौं की बिजाई के साथ ही होगा।

बिजाई का ढंग :

हिमाचल चना–1, हिमाचल चना–2 व जी.पी.एफ. 2 किस्मों को 30 सैं.मी. की दूरी की कतारों में एवं एच.पी.जी.–17 को 50 सै.मी. की दूरी की कतारों में बीजना चाहिए। बीज को 10–12.5 सै.मी. गहरा डालना चाहिए क्योंकि कम गहरी बिजाई करने पर उखेड़ा रोग लग जाता है।

बीज की मात्रा :

शुद्ध फसल के लिए	**बीज की मात्रा**
छोटे व मध्यम दाने जैसे हिमाचल चना–2 व जी.पी.एफ.–2	40–45 कि.ग्रा./हैक्टेयर
बड़े दाने जैसे एच.पी.जी–17	80 कि.ग्रा./हैक्टेयर

खाद व उर्वरक :

तत्व (कि.ग्रा./है.)			**उर्वरक (कि.ग्रा./है.)**		
ना.	फा.	पो.	यूरिया	एसएसपी	एम ओ पी
30	60	30	65	375	50
			उर्वरक (कि.ग्रा./बीघा)		
			5	30	4

बिजाई के समय फास्फोरस, पोटाश की पूरी मात्रा व नाईट्रोजन की आधी मात्रा पोरा विधि से डालें और बाकि नाईट्रोजन की आधी मात्रा 4–5 सप्ताह बाद डालें। यदि गेहूं के साथ मिश्रित खेती हो तो अतिरिक्त उर्वरक नहीं डालने चाहिए।

जल प्रबंधः

यदि बिजाई के समय भूमि में पर्याप्त नमी हो और उसके बाद सर्दियों में 1–2 बारिशें हो जाएं तो दलहनी फसलों को सिंचाई की कोई जरूरत नहीं होती है। फली वाली फसलों को आरंभ मे वैसे भी पानी नहीं देना चाहिए क्योंकि इससे एक तो ज़ड़ों मे गांठे बनने में रूकावट आती है और दूसरा जड़ों को पर्याप्त आक्सीजन नहीं मिल पाती है। यदि सिंचाई की सुविधा हो तो एक सिंचाई फूल पड़ने पर तथा दूसरी सिंचाई फलियां बनने पर देनी चाहिए।

पौध संरक्षण :

आक्रमण / लक्षण	रोकथाम
(1) कीट	
फली छेदक : आरम्भ में सुंडियां पौधे की ऊपर की पत्तियों को खाती हैं और बाद में फलियों में छेद करके अंदर चली जाती हैं और बढ़ते हुए दानों को खाती है।	50 प्रतिशत फूल आने पर 875 मि. ली. मोनाक्रोटोफॉस 36 एस. एल. (मोनोसिल) या 1250 ग्राम कार्बेरिल 50 डब्ल्यू.पी. (सेविन) को 625 लीटर पानी में प्रति हैक्टेयर छिडकाव करें या 50 प्रतिशत फूल आने पर अजेडिरेकटिन (0.03%) का छिड़काव करें, यदि कीड़े का प्रकोप फिर भी हो तो 45 दिन के वाद फिर छिड़काव करें। **सावधानी** : हरी फलियों को दवाई छिड़कने के 45 दिनों तक खाने के लिए न तोड़ें।
कटुआ कीट : मटमैले रंग की सुडियां भूमि में छिपी रहती हैं और उगते पौधे को भूमि की सतह से काट कर बहुत हानि पहुंचाती हैं।	दो लीटर क्लोरपाईरीफॉस 20 ई. सी. को 25 कि. ग्रा. रेत में मिलाकर प्रति हैक्टेयर बिजाई से पहले खेत में डालें।
(2) बिमारियां	
झुलसा रोग : यह बिमारी गहरे काले धब्बों व छोटे–छोटे काले बिंदुओं के रूप में तने, शाखाओं, पत्तों व फलियों पर प्रकट होती है। पत्तों और फलियों पर बिमारी के लक्षण एक समान दिखाई देते हैं। अधिक बिमारी होने पर पूरा पौधा ही झुलस कर मर जाता है।	1.रोग प्रतिरोधी किसमें जेसे हिम पालम चना–1 तथा हिमाचल चना–2 लगाएं। 2. रोग रहित व स्वस्थ बीज लगाएं। 3 बीज को वीटावैक्स/इंडोफिल एम –45 (2. 5 ग्रा. /कि. ग्रा. बीज) से उपचार करें। 4. बिमारी के लक्षण आते ही मैन्कोजेब

	(इंडोफिल एम –45 / डाईथेन एम–45) (0.25%) से छिड़काव करें तथा 45 दिन के बाद फिर छिड़काव करें।
उखेड़ा रोग : बिमारी वाले पौधे पहले पीले पड़ते हैं फिर मुरझा कर अंत में सूख जाते हैं। जड़ें काली हो जाती हैं और पूरी सड़ जाती हैं।	1. रोग प्रतिरोधि किस्में जैसे हिमाचल चना–2, एच.पी.जी.–17 लगाएं। 2. गहरा हल चला कर भूमि तैयार करनी चाहिए। 3. फसल की देरी से बिजाई करनी चाहिए । 4. बीज का बैवीस्टीन थीरम (1:1) (2.5 ग्राम / कि. ग्राम बीज) से उपचार करें।

मसर

मसर रबी की दूसरी महत्वपूर्ण दलहनी फसल है। मसर की औसतन पैदावार 8.25 क्विंटल / हैक्टेयर है (वर्ष 2011–12 स्त्रोतः अर्थशास्त्र एवं संख्याकि निदेशालय, कृषि भवन नई दिल्ली) जो राष्ट्रीय औसत से काफी कम है। इसे कुछ किसान अपनी घरेलू खपत के लिए उगाते हैं।

अनुमोदित किस्में :

विपाशा (एच.पी.एल.–5)

इसके पत्ते हल्के हरे रंग के व बिना चिकनाहट के होते हैं। इसके दाने मोटे और हल्के खाकी चमकीले रंग के होते हैं परन्तु अंदर से हल्के नारंगी होते हैं। इस किस्म में सख्त बीज नहीं होते हैं। यह झुलसा रोग के लिए प्रतिरोधी किस्म है। यह 175–180 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी उपज 14–15 क्विंटल / हैक्टेयर है।

मारकण्डेय (ई.सी.–1)

यह एक नई किस्म है जिसे प्रदेश के समपर्वतीय व निचले पर्वतीय सम–उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रों (खण्ड–1) के लिए अनुमोदित किया गया है। इस किस्म के पौधे मध्यम ऊंचाई (40–45 सै. मी.) के व दाने मोटे तथा हल्के भूरे रंग के होते हैं। यह किस्म मसर की मुख्य बीमारियों जैसे उकठा, झुलसा, जड़ सड़न तथा रतुआ रोग प्रतिरोधी किस्म है। इसकी औसत उपज 10–12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है। यह 160–170 दिन में पककर तैयार हो जाती है।

भूमि :

सभी प्रकार की भूमि जिसमें पानी खड़ा न रहता हो, मसर की खेती के लिए उपयुक्त मानी जाती है।

भूमि की तैयारी :

दो–तीन जुताईयां बिजाई के लिए काफी हैं।

बिजाई का समय :

अक्टूबर के अंत से नवंबर के मध्य तक मसर की बिजाई के लिए उत्तम समय है। यदि सूखा पड़े या बारिश न हो तो दिसंबर के पहले सप्ताह तक इसकी बिजाई की जा सकती है।

बिजाई का ढंग :

फसल को केरा विधि से 25–30 सै.मी. की दूरी पर पंक्तियों में बीजें।

बीज की मात्रा

सही समय की बिजाई के लिए 25–30 कि. ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर पर्याप्त होता है। पछेती बिजाई के लिए बीज की मात्रा थोड़ी बढ़ा देनी चाहिए जिससे पौधों की संख्या पर्याप्त हो जाए।

खाद व उर्वरक :

तत्व (कि.ग्रा./है.)			**उर्वरक (कि.ग्रा./है.)**		
ना.	फा.	पो.	यूरिया	एसएसपी	एम ओ पी
10	40	–	22	250	–
			उर्वरक (कि.ग्रा./बीघा)		
			2	20	–

खादों को बिजाई के समय ही खेत में डाल देना चाहिए।

जल प्रबन्धः

चने की तरह मसर की भी सिंचाई के बिना खेती की जाती है परंतु फलियां बनने के समय एक सिंचाई दी जाए तो उपज में बढ़ौतरी हो जाती है।

निराई तथा गुडाई :

खरपतवारों को नियंत्रण करने के लिए एक या दो निराई–गुड़ाई करना लाभदायक है।

तिलहनी फसलें

हिमाचल में तीन प्रमुख तिलहनी फसलें–सरसों वर्गीय तिल व अलसी उगाई जाती हैं। प्रदेश में लगभग बीस हजार हैक्टेयर भूमि पर तिलहनी फसलों की खेती की जाती है जिसमें 60 प्रतिशत भूमि पर रबी तिलहनी फसलें उगाई जाती हैं।

सरसों वर्ग के तिलहन

भूरी सरसों, राया, गोभी सरसों व तोरिया इस वर्ग के मुख्य तिलहन हैं जो प्रदेश में (2017–18) लगभग 9839 हैक्टेयर भूमि पर उगाए गए जिससे 5802 हजार टन पैदावार हुई व उपज 0.58 क्विंटल/हैक्टेयर रही।

उपयुक्त तिलहनों में भूरी सरसों का मुख्य स्थान है परंतु तोरिया, गोभी सरसों व राया की उन्नत किस्मों के विकास से बहुत से किसान इन फसलों को उगा रहे हैं क्योंकि सरसों की अपेक्षा इनसे अधिक लाभ प्राप्त हो रहा है। प्रायः इन फसलों को बारानी परिस्थितियों में उगाया जाता है। अतः उपज कम होती है। यदि इन फसलों की अनुमोदित किस्मों को सही ढंग से लगाया जाये तो उपज में काफी वृद्धि हो सकती है।

भूरी सरसों

यह फसल प्रदेश में उगाए जाने वाले सरसों वर्ग के तिलहनों की मुख्य फसल है। पीली सरसों पर कोहरे का प्रकोप होने के कारण इसकी खेती कम की जाती है।

अनुमोदित किस्में :

के.बी.एस.–3

इस किस्म के निचले पत्ते चौड़े व गहरे हरे रंग के, तना मोटा, शाखाएं अधिक, फलियां लम्बी, बीज गहरे भूरे रंग व मध्यम आकार के होते हैं। पौधों की मध्यम लंबाई व फसल 150–155 दिनों में तैयार हो जाती है। यह किस्म सफेद रतुआ के लिए रोग प्रतिरोधी है व कोहरे को सहन कर सकती है। इसमें 46% तेल होता है। उपज 10–11 क्विंटल/हैक्टेयर है।

एच.पी.बी.एस.–1

यह अधिक उपज देने वाली नई प्रजाति है। इसका अनुमोदन प्रदेश के सिंचित क्षेत्रों में समय पर बिजाई के लिए किया गया है। इस किस्म के पौधों के निचले पत्ते चौड़े व गहरे हरे रंग के होते हैं। इसका तना मोटा तथा फसल एक ही समय में पक कर तैयार होती है। यह किस्म लगभग 147 दिनों में तैयार होती है तथा सफेद रतुआ रोग प्रतिरोधी है। इसकी उपज 12–14 क्विंटल हैक्टेयर के लगभग है तथा इसके दानों में 39.1 प्रतिशत तेल की मात्रा होती है।

राया

राया भी इस वर्ग की एक मुख्य तिलहनी फसल है जिसे निचले पर्वतीय क्षेत्रों में शुद्ध फसल के रूप में या गेहूं में मिश्रित खेती के साथ लगाया जाता है। फसल को बारानी तथा सिंचित परिस्थितियों में उगाया जाता है। चूंकि यह फसल खादों पर निर्भर करती है, अतः सिंचित क्षेत्रों में अच्छी उपज देती है।

अनुमोदित किस्में :

आर.सी.सी.–4

इस किस्म के पौधे मध्यम ऊंचाई वाले, ठोस तथा अधिक शाखाओं के होते हैं और तैयार होने पर तना बैंगनी रंग का हो जाता है। बीज मध्यम आकार के गहरे भूरे रंग के होते हैं। यह किस्म गेहूं के साथ मिश्रित रूप में लगाने के लिए भी उपयुक्त है। यह 155–160 दिनों में तैयार हो जाती है व इसमें 40 प्रतिशत तेल होता है। इसकी उपज 11–14 क्विंटल/हैक्टेयर है।

करण राई

यह राई–सरसों समूह की एक नई फसल है जो प्रदेश के बारानी क्षेत्रों के लिए एक वरदान सिद्ध हुई है। इसके अतिरिक्त ऐसे क्षेत्र जहां पर फसल आँधी तूफान से गिर जाती है या जहां पर पक्षी इत्यादि सरसों की फसल को काफी नुकसान पहुंचाते हैं, इन क्षेत्रों में किसान करण राई उगाकर अधिक आय अर्जित कर सकते हैं।

जयंती

यह प्रजाति प्रदेश के निचले एवं मध्य पर्वतीय, बारानी क्षेत्रों में मक्की की कटाई के उपरान्त संरक्षित नमी में समय व अगेती बिजाई हेतू उपयुक्त है। इसके दाने पीले व मोटे होते हैं जिनमें 40 प्रतिशत तेल पाया जाता है। इसकी फसल लगभग 162–175 दिन में पककर तैयार हो जाती है तथा इसमें विभिन्न रोग व कीटों का प्रकोप अपेक्षाकृत कम होता है। इसकी औसतन उपज 15–20 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

ट्रॉम्बे हिम पालम राया 172

यह किस्म समय पर बीजाई के लिए सिंचित क्षेत्रों के लिए अनुमोदित है। इस किस्म के पौधे मध्यम ऊंचाई वाले, ठोस व अधिक शाखाओं के होते हैं। यह किस्म 150–160 दिनों मे तैयार हो जाती है। इस की उपज 11 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है तथा इस में 40 प्रतिशत तेल पाया जाता है।

भूमि व जलवायु :

सरसों वर्ग के तिलहन, हल्की से भारी दोमट भूमि में अच्छे होते हैं। सरसों हल्की दोमट मिट्टी में तथा राया शुष्क क्षेत्रों में भी उगाया जा सकता है। परंतु राया मध्यम से भारी वर्षा वाले क्षेत्रों मे अच्छी उपज देता है।

बिजाई का समय :

सरसों व राया : अक्तूबर का पहला पखवाडा इसके लिए उपयुक्त है यदि इनको किसी अन्य फसल के साथ मिश्रित खेती में बोया जाए तो बिजाई का समय मुख्य फसल की बिजाई के समय पर निर्भर करता है।

बिजाई का ढंग :

शुद्व फसल के लिए बीज को 30 सैं. मी. दूरी की पंक्तियों में केरा या पोरा विधि से बिजाई करनी चाहिए। बीज को भूमि में 2–3 सै. मी. गहराई तक डालना चाहिए। यदि भूमि मे नमी की कमी हो तो बीज को एक रात के लिए गीली मिट्टी में रखना चाहिए ताकि बीज पानी सोख लें।

बीज की मात्रा :

शुद्व फसल के लिए 6 कि. ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर प्रयोग में लाना चाहिए।

खाद व उर्वरक :

तत्व (कि.ग्रा./है.)				उर्वरक (कि.ग्रा./है.)			
ना.	फा.	पो.	गंधक	यूरिया	एसएसपी	एम ओ पी	जिप्सम
60	40	40	20	130	250	65	140
					उर्वरक (कि.ग्रा./बीघा)		
				10	20	5	11

फास्फोरस, पोटाश व गंधक की पूरी मात्रा व नाईट्रोजन की आधी मात्रा बिजाई के समय दें। शेष नाईट्रोजन की आधी मात्रा फसल मे फूल आने से पहले दें यदि भूमि में पर्याप्त नमी हो।

जल प्रबंधः

प्रायः रबी तिलहनी फसलों को मिश्रित रूप में अन्न वाली फसलों के साथ उगाया जाता है अतः मुख्य फसल को दी गई सिंचाईयां इन फसलों के लिए पर्याप्त होती हैं। यदि इन्हें शुद्व फसल के रूप में उगाया गया हो तो बिजाई के समय सही नमी न होने पर खेत में एक सिंचाई दें। यदि सर्दी के मौसम में एक या दो बार वर्षा हो जाए तो सिंचाई की जरूरत नहीं रहती है। राया फसल में 75% फूल आने पर एक सिंचाई अवश्य दें।

निराई व गुड़ाई :

जब फसल तीन सप्ताह की हो जाए तो एक बार निराई करनी चाहिए ताकि पौधों के मध्य 10–15 सैं. मी. अंतर रह जाए। खरपतवारों को नियंत्रण करने के लिए बिजाई के 30 व 60 दिनों के बाद हाथ से खरपतवारों को निकालें। यदि संभव हो तो फसल बिजाई के 30 दिन बाद आइसोप्रोटुरान (1.0 कि.ग्रा./ है.) का 700–800 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टेयर छिड़काव करें।

कटाई :

जब फलियां पीली पड़ने लगें तो फसल को काट लेना चाहिए। सरसों की कटाई मार्च में तथा राया की अप्रैल में हो जाती है परंतु यह विभिन्न स्थानों के अनुसार निर्भर करती है।

गोभी–सरसों

हिमाचल में गोभी सरसों की खेती काफी समय से की जा रही है। यह रोशनी तथा गर्मी–सूक्ष्मग्राही फसल है। अतः फरवरी महीने के मध्य तक फसल की थोड़ी ही बढ़ौतरी होती है परंतु इस माह के अंत में जब मौसम गर्म होने लगता है तो इसकी बहुत जल्दी बढ़ौतरी होती है। यह अधिक क्षेत्रों में उगाई जाने तथा अधिक उपज देने वाली फसल है जिसमें तेल की अधिक मात्रा है जो उत्तम गुण वाला है।

अनुमोदित किस्में :

नीलम (एच.पी.एन.–3)

यह एक नई किस्म है जिसे प्रदेश में सिंचित व बारानी क्षेत्रों में समय व देरी की बिजाई के लिए शुद्ध फसल के रूप में अनुमोदित किया गया है। इस किस्म के पौधे मध्यम लम्बाई के तथा प्रत्येक पौधे में अधिक टहनियां होती हैं। इसमें 42.8% तेल होता है। इसका तेल व खल विशेष प्रकार का है जो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के लगभग हैं। यह सफेद रतुए के लिए रोग प्रतिरोधी है परन्तु झुलसा रोग का आक्रमण होता है। इसकी पैदावार 15–16 क्विंटल/हैक्टेयर के लगभग है।

ओ.एन.के.–1

इस नई प्रजाति को प्रदेश के निचले एवं मध्यवर्ती पहाड़ी सिंचित क्षेत्रों में समय पर बिजाई हेतु अनुमोदित किया गया है। इसके पत्ते चौड़े व हल्के हरे रंग के होते हैं। इसके फूल अन्य किस्मों की तुलना में छोटे परन्तु अधिक पीले व चमकदार होते हैं। पौधे मध्यम लम्बाई के तथा प्रत्येक पौधे में अधिक टहनियां होती हैं जिनमें अपेक्षाकृत अधिक फलियां लगती हैं। यह किस्म लगभग 160 दिनों में पक कर तैयार होती है तथा सफेद रतुआ रोग प्रतिरोधी है। इस किस्म में डाउनी मिल्डयू यानि मृदुरोमिल आसिता, चूर्णलासिता रोग, स्क्लेरोटीनिया तना सड़न रोग तथा तेले का प्रकोप अपेक्षाकृत कम होता है। इसकी औसतन पैदावार 14–15 क्विंटल/हैक्टेयर तथा बीज में तेल की मात्रा 40.3% होती है।

जी.एस.सी. 7

यह निचले व मध्यम ऊँचाई वाले सिंचित क्षेत्रों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय मानक की केनोला "00" किस्म है अतः व्यावसायिक दृष्टि से खेती करने वालों के लिए यह उत्तम किस्म है। इसमें लगभग 40.5 प्रतिशत तेल है। इसके पौधे ज्यादा शाखाओं वाले, मध्यम ऊँचाई तथा मध्यम अवधि में पककर तैयार होने वाले हैं। औसत उपज 14–15 क्विंटल/हैक्टेयर है।

गोभी सरसों–चना अंतरफसल :

प्रदेश के निचले बारानी क्षेत्रों में अधिक पैदावार लेने के लिए गोभी सरसों (नीलम)–चना के 1:1 अंतरफसल अपनाने की सिफारिश की जाती है।

बिजाई का समय :

अक्तूबर का पहला पखवाड़ा।

बीज की मात्रा :

6 कि. ग्रा. / है.

दूरी: कतार से कतार 30 सैं. मी. एवं पौधा से पौधा 40 सैं. मी. रखना चाहिए।

यदि तोरिया और गोभी–सरसों को आपस में एक कतार छोड़कर 22.5 सैं. मी. के अंतर पर लगाएं तो यह काफी लाभदायक रहती हैं।

खाद व उर्वरक :

तत्व (कि.ग्रा. / है.)			उर्वरक (कि.ग्रा. / है.)		
ना.	फा.	पो.	यूरिया	एसएसपी	एम ओ पी
120	60	40	250	375	65
			उर्वरक (कि.ग्रा. / बीघा)		
			20	30	5

फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा व नाईट्रोजन की आधी मात्रा बिजांई के समय दें। शेष नाईट्रोजन की आधी मात्रा बिजाई के 60 दिन के बाद तथा बाकि आधी मात्रा बिजाई से 80–90 दिन के बाद (फूल आने से पहले) दें।

खरपतवारों की रोकथाम :

1. बिजाई से 40 व 70 दिनों के बाद दो बार हाथ से खरपतवारों को निकालने से अच्छी रोकथाम हो जाती है।
2. फसल के उगने से पहले पैंडीमिथालिन 1.4 कि.ग्रा. / है. (स्टाम्प 30 ई.सी.) या आइसोप्रोटुरान 1 कि.ग्रा. / है. बिजाई के 30–35 दिन के बाद 700–800 लीटर पानी में प्रति हैक्टेयर छिड़काव करें।

तोरिया

यह थोड़े समय में तैयार होने वाली सरसों वर्ग की फसल है और मक्की व गेहूं की मुख्य फसलों के बीच तोरिया की फसल ली जा सकती है। इसे घाटी तथा निचले पर्वतीय क्षेत्रों में 7000 मीटर ऊंचाई तक उगाया जा सकता है। मक्की की फसल की कटाई के बाद सितंबर के मध्य से अंत तक इसकी बिजाई की जा सकती है। 10–11 सप्ताह में इसकी कटाई करके गेहूं की अगेती पकने वाली किस्म या आलू की बिजाई की जा सकती है।

अनुमोदित किसमें :

भवानी

इसके पौधे छोटे, अधिक शाखाओं व लम्बी फलियों वाले तथा बीज चमकते भूरे रंग के होते हैं। चूंकि यह जल्दी तैयार होने वाली किस्म है अतः इसमें तेले का आक्रमण नहीं हो पाता है। यह 70–80

दिनों में तैयार होने वाली किस्म है। इसकी उपज 7–8 क्विंटल / हैक्टेयर है।

भूमि व जलवायु :

तोरिया दोमट भूमि में अच्छा पैदावार देती है और मध्यम से भारी वर्षा वाले क्षेत्रों में इसकी खेती अच्छी होती है।

बिजाई का समय :

तोरिया की बिजाई 20 सिंतबर तक कर देनी चाहिए। देरी से बिजाई करने पर इसकी उपज में कमी आती है।

बिजाई का ढंग :

शुद्ध फसल के लिए बीज को 30 सै.मी. दूरी की पंक्तियों में केरा या पोरा विधि से बीजना चाहिए। बीज को 2–3 सै.मी. तक गहरा डालना चाहिए । यदि भूमि में नमी की कमी हो तो बीज को एक रात के लिए गीली मिट्टी में रखना चाहिए ताकि बीज पानी सोख ले।

बीज की मात्रा :

फसल की बिजाई के लिए 10–15 कि. ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर पर्याप्त है।

खाद व उर्वरक :

तत्व (कि.ग्रा. / है.)			उर्वरक (कि.ग्रा. / है.)		
ना.	फा.	पो.	यूरिया	एसएसपी	एम ओ पी
60	40	40	130	250	65
			उर्वरक (कि.ग्रा. / बीघा)		
			10	20	5

उर्वरकों की सारी मात्रा बिजाई के समय डाल दें नहीं तो फसल देर से पकेगी जिसके कारण गेहूं की बिजाई में भी देर हो जाएगी।

निराई–गुड़ाई :

जब फसल 3 सप्ताह की हो तो घने पौधों को निकाल दें ताकि पौधों के मध्य 10–15 सैं. मी. अन्तर रह जाए। खरपतवारों के लिए 1–2 बार निराई–गुड़ाई करें।

कटाई :

जब फलियां पीली हो जाएं तो फसल को काट लेना चाहिए । तोरिया दिसंबर में काट लिया जाता है जो क्षेत्रों की ऊंचाई पर निर्भर करता है।

पौध संरक्षण :

आक्रमण / लक्षण	**रोकथाम**
(1) कीट	
तेला : पौधे पर यह कीट बहुत अधिक संख्या में पाया जाता है और बढ़ती टहनियों, फूलों और फलियों पर मध्य फरवरी से कटाई तक रहता है। यह कीट रस चूसते है जिसके कारण कीट ग्रसित पौधों में बीज कम बनते हैं।	फसल पर 750 मि. ली. मिथाईल डैमिटान 25 ई. सी. (मैटासिस्टाक्स) या 750 मि.ली. डाईमिथोएट 30 ई. सी. (रोगर) 750 ली. पानी में प्रति हैक्टेयर छिड़काव उस समय करें जब मध्य की शाखा में कम से कम 50 तेले या 4 मि.मी. तेले की संख्या हो। **सावधानियां :** 1. दवाई छिड़कने के बाद सरसों के पत्तों को साग के लिए प्रयोग न करें। 2. साग के लिए उगाई गई फसल पर मैलाथियान 50 ई. सी (मैलाथियान / साईथियान को 2 मि.ली. / लीटर पानी में छिड़काव करें परंतु छिड़काव करने के कम से कम 7 दिन तक पत्ते न तोडें। 3. जब फसल में फूल आ रहें हों और छिड़काव करना आवश्यक हो तो शाम के समय छिड़काव करें ताकि परागण करने वाले कीड़ों को हानि न हो। साथ में मधु मक्खी पालकों को सूचित कर दें कि अगले दिन अपने छत्तों को बंद रखें।
पर्णखनिक कीट (लीफ माईनर): छोटे छोटे कीड़े पत्तों पर सफेद चमकीली सुरंगे बना देते है। फरवरी–मार्च में प्रायः इनसे हानि होती है।	बीज वाली फसल पर 750 मि.ली. मिथाइल डैमिटान 25 ई. सी. (मैटासिस्टाक्स) या 750 मि. ली. डाईमिथोएट 30 ई. सी. (रोगर) को 750 लीटर पानी में प्रति हैक्टेयर छिड़काव करें।
रंग – बिरंगे बग : छोटे व बड़े कीड़े पौधों से रस चूसते हैं जिसके कारण उपज में कमी हो जाती है।	फसल में 750 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस 36 एस. एल. (न्यूवान / मोनोसिल) या 750 मि.ली. मिथाइल डैमिटान 25 ई. सी. (मैटासिस्टाक्स) को 750 ली. पानी में प्रति हैक्टेयर छिड़काव करें।
सरसों की आरा मक्खी : इसकी सुंडियां कोमल पत्तों में छेद कर देती हैं और अधिक आक्रमण होने पर सारे पत्तों को खा जाती हैं।	फसल की आरम्भिक अवस्था में 500 मि.ली. मैलाथियान / साईथियान 50 ई. सी. का 500 लीटर पानी में प्रति हैक्टेयर छिड़काव करें

गोभी सरसों की सुंडियां : कभी कभी इनका बहुत प्रकोप होता है। यह सुंडिया पत्तों तथा बनती हुई फलियों को खाती हैं। छोटी अवस्था में सुंडियां इक्ट्ठे होकर पत्तों को खाती हैं जबकि बड़ी सुंडियां फसल में फैल जाती हैं और हानि करती हैं।	फसल में 1500 मि.ली. क्युनालफॉस 25 ई.सी. (एकालक्स) को 750 लीटर पानी में प्रति हैक्टेयर छिड़काव करें। सावधानी : शुरू से ही सावधान रहें और जैस ही सुंडियां पत्तों को खाती नजर आएं, नष्ट कर दें।
(2) बिमारियाँ	
झुलसा रोग : पत्तों और फलियों पर गोल, गहरे भूरे रंग के धब्बे बन जाते है जिसके कारण पौधे कमजोर होकर कम पैदावार देते हैं।	1. बीज का मेनकोजेब (इंडोफिल एम–45) (3 ग्रा / कि.ग्रा. बीज) से उपचार कर बिजाई करें। 2. फसल में मेनकोजेब (इंडोफिल एम–45 / डाईथेन एम–45) (0.2%) से 10–15 दिनों के अंतर पर दो बार छिड़काव करें।
सफेद रतुआ / सफेद ब्लिस्टर : पत्तों की निचली सतह पर सफेद छाले जैसे धब्बे प्रकट होते हैं जिसके कारण ऊपर की सतह पर हल्का हरापन प्रकट होता है। बाद में यह फट जाते हैं जिससे फफूंद का सफेद पदार्थ प्रकट होता है। टहनियां और फूलों के भाग मोटे हो जाते हैं।	1. बिमारियां रोग प्रतिरोधी किस्में लगाएं। 2. स्वस्थ व रोग रहित बीज की बिजाई करनी चाहिए। 3. फसल पर इंडोफिल एम–45 (0.25%) का 10–15 दिनों के अंतर पर दो बार छिड़काव करें।
डाऊनी मिल्डयू : पत्तों की निचली सतह पर गुलाबी से भूरे रंग के धब्बे प्रकट होते हैं। यह धब्बे छोटे रहते हैं या काफी बड़े हो जाते हैं और ऊपर की सतह पर यह धब्बे मटमैले या पीले से होते हैं। बाद में निचली सतह पर कवक के अंश साफ दिखाई देते हैं।	1. रोग प्रतिरोधी किस्में लगाएं। 2. फसल चक्र अपनाने एवं शुरू में घास / टंडों इत्यादि को निकालने से शुरू में ही बिमारी की रोकथाम की जा सकती है।

अलसी

अलसी हिमाचल प्रदेश की एक मुख्य तिलहनी फसल है परंतु इसकी खेती कांगड़ा जिला के पालम क्षेत्र तथा मंडी जिला में ही की जाती है और यहां से ही प्रदेश की कुल खेती की पैदावार होती है। इसकी खेती 2017–18 में 700 हैक्टेयर क्षेत्र में की गई जहां से 240 टन दानों का उत्पादन हुआ। अलसी की औसत पैदावार 2.43 क्विंटल / हैक्टेयर है।

अनुमोदित किस्में :

बिनवा (के.एल. 240)

यह एक मात्र गाढ़े नीले फूलों व पीले दानों वाली किस्म है जिसे खेत तैयार कर गेहूँ की तरह बीजा जा सकता है। इसके पौधे मध्यम आकार के होते हैं तथा यह 170–175 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है। यह रतुआ व सूखा रोग प्रतिरोधी व अल्ट्रनेरिया रोग के प्रति मध्यम प्रतिरोधी किस्म है। इसकी

औसत पैदावार 8–9 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है। इसके बीजों में 41.3 प्रतिशत तेल होता है।

बनेर (के.एल. 224)

यह खड़े धान की फसल में छट्टा लगाने के लिये अनुमोदित किस्म है। इसके फूल बैंगनी नीले रंग के होते है। यह किस्म रतुआ रोग के लिये सहनशील है। इसकी औसत पैदावार 4.5–5.0 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है तथा तेल की मात्रा 39.7 प्रतिशत है।

हिम अलसी–2 (डी.पी.एल.–17)

यह द्विगुणी तथा प्याले की तरह आकार वाले सफेद फूलों वाली किस्म है। इसे सिंचित व असिंचित क्षेत्रों में उगाया जा सकता है। पौधों की कुल लम्बाई (85–90 सै.मी.) व तकनीकी लम्बाई (65–66 सै.मी.) होती है। दाने भूरे रंग के व मोटे (8.4 ग्रा./1000 दानें) होते है। इसमें तेल की मात्रा 40.5 प्रतिशत होती है। यह 185 से 188 दिनों में तैयार हो जाती है। यह किस्म सिंचित क्षेत्रों में 10–11 क्विंटल बीज व 5.5–6.0 क्विंटल रेशे की पैदावार देती है। यह किस्म रतुआ व झुलसा रोग प्रतिरोधी किस्म है परन्तु आर्द्र क्षेत्रों मे चूर्णलासिता रोग का थोड़ा प्रकोप होता है। यह किस्म अंसिचित क्षेत्रों में 5.5. 5–6.0 क्विटंल बीज व 2.0–2.5 क्विटंल रेशे की पैदावार देती है।

हिमानी (के.एल. 214)

यह नीले फूलों वाली व भूरे छोटे दानों (5.0 ग्रा./1000 दानें) वाली उपरोक्त विधि से उगाने वाली किस्म है। इसकी औसत पैदावार 4.5 से 5.0 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है। यह रतुआ व चूर्णलासिता रोगों के लिये मध्यम प्रतिरोधी किस्म है।

भागसू (के.एल. 215)

यह नीले फूलों वाली व भूरे छोटे दानों वाली (5.6 ग्रा./1000 दाने) उत्तेरा विधि से उगाई जाने वाली एक नई किस्म है। यह किस्म रतुआ, मुरझान व झुलसा रोगों के लिए मध्यम प्रतिरोधी है। इसकी औसत पैदावार 4.5–5.0 क्विंटल/हैक्टेयर तथा दानों में तेल की मात्रा 36.28 प्रतिशत है।

भूमि :

अलसी उगाने के लिए दोमट से लेकर चिकनी मिट्टी जिसमें जल निकास अच्छा हो, अपेक्षाकृत अच्छी मानी जाती है। यह फसल धान वाले खेतों में भी अच्छी होती है।

खेत की तैयारी:

भली–भांति खेत तैयार करने के लिए 2–3 जुताईयां देसी हल से करनी चाहिए खरपतवार निकल जाएं तथा उसके बाद सुहागा करना चाहिए।

बिजाई का समय व ढंग:

अक्तूबर का पहला पखवाड़ा बिजाई के लिए उपयुक्त है। बीज को 23 सै. मी. की पंक्तियों में 4–5 सै. मी. गहरा केरा विधि से बोना चाहिए।

बीज की मात्रा :

तैयार किए गए खेत में 40 कि. ग्रा. बीज तथा खड़ी धान की फसल में बिजाई के लिए 75 कि. ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर पर्याप्त है।

खाद व उर्वरक :

तत्व (कि.ग्रा./है.)			उर्वरक (कि.ग्रा./है.)		
ना.	फा.	पो.	यूरिया	एसएसपी	एम ओ पी
50	40	20	109	250	34
			उर्वरक (कि.ग्रा./बीघा)		
			9	20	2.7

फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा और नाईट्रोजन की आधी मात्रा बिजाई के समय देनी चाहिए, जबकि शेष नाईट्रोजन की आधी मात्रा बिजाई के 3–4 सप्ताह बाद देनी चाहिए। यदि उत्तेरा विधि से खेती करनी हो तो नाईट्रोजन 60 कि. ग्रा./ हैक्टेयर की दर से देनी चाहिए। इसमें आधी मात्रा फसल उगने के बाद तथा आधी मात्रा फूल आने से पहले देनी चाहिए।

जल प्रबन्धः

एक सिंचाई फसल में फूल आने पर तथा दूसरी सिंचाई फलियां बनने के समय देनी चाहिए।

निराई–गुड़ाईः

यदि फसल को खेत की तैयारी के बाद बोया गया हो तो बिजाई के 4 व 8 सप्ताह बाद निराई–गुड़ाई करनी चाहिए। उसके बाद जरूरत के अनुसार निराई–गुड़ाई करनी चाहिए। रासायनिक विधि द्वारा खरपतवारों की रोकथाम के लिए बिजाई के 30–35 दिन के बाद आईसोप्राटुरान (1250 ग्रा. /हैक्टेयर) का छिड़काव करें।

कटाईः

फसल अप्रैल–मई में कटाई के लिए तैयार हो जाती है।

पौध संरक्षण :

आक्रमण/लक्षण	**रोकथाम**
(1) कीट : अलसी की फसल में कीट का प्रकोप नहीं होता है।	
(2) बिमारियां	
रतुआ : गुलाबी रंग के धब्बे पत्तों, तनों व फलियों की सतह पर प्रकट होते हैं जो बाद में काले फफूंद समूह में परिवर्तित हो जाते हैं।	1. अनुमोदित किस्में लगाएं 2. फसल में डाईथेन जैड–78/इंडोफिल एम–45 (0.25%) छिड़काव करें।

सूखा रोग : इसके आक्रमण से छोटे छोटे पौधे मर जाते हैं। बड़े पौधे पीले पड़कर मुरझा जाते हैं।	रोग प्रतिरोधी अनुमोदित किस्में ही बीजें।
चूर्णलासिता रोग : भूरे से सफेद रंग की फफूंद पत्तों व टहनियों पर आती है जिसके कारण पत्ते झड़ जाते हैं।	1. रोग प्रतिरोधि किस्में लगाएं। 2. प्रभावित क्षेत्रों में सल्फैक्स (0.25%) का छिड़काव करें।

अलसी का रेशा निकालने की नई विधिः इस विधि में अलसी के वण्डलों को सीमेन्ट के बने टैंक जिनका आकार 2 मीटर X 2 मीटर X 0.6 मीटर होता है, में डाला जाता है तथा इसके साथ में वेसिलस सवटीलीस नामक जीवाणु का 1 प्रतिशत साधारण ईनोकुलम डाला जाता है। इस विधि द्वारा रेटिंग में 3–4 दिन का कम समय लगता है।

कन्द की फसल

आलू

आलू की फसल हिमाचल प्रदेश की आर्थिक व्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान रखती है क्योंकि यहां की जलवायु बीज के आलू उत्पादन के लिए अनुकूल है। प्रदेश के ऊंचे पर्वतीय क्षेत्रों में जहां समशीतोष्ण जलवायु के साथ–साथ तेज हवा और कम आर्द्रता होती है और तेले का प्रकोप भी बहुत कम होता है, रोगमुक्त बीज के आलू पैदा किए जाते हैं। हिमाचल प्रदेश में (2018–19) आलू की खेती लगभग 14.4 हजार हैक्टेयर में की गई तथा 186.80 हजार टन उत्पादन हुआ व उत्पादन 129.66 क्विंटल हैक्टेयर रहा।

अनुमोदित किस्में :

कुफरी चंद्रमुखी

यह जल्दी तैयार होने वाली किस्म है और मैदानी क्षेत्रों से लेकर पर्वतीय क्षेत्रों तक उगाने के लिए उपयुक्त है। यह किस्म 110–130 दिनों में तैयार हो जाती है। इसके पौधे मध्यम लम्बाई के, शीघ्र बढ़ने वाले व फूल हल्के गुलाबी रंग के होते है। इसके कन्द बडे, अंडाकार, एक समान व उथली आंखो वाले होते हैं तथा गुद्दा मटमैला सफेद होता है। इस किस्म के आलुओं के रंग–रूप में गिरावट बहुत धीरे होती है अतः इसे बीज के लिए दूर के क्षेत्रों में भेजने के लिए उपयुक्त माना गया है। इसकी उपज ऊंचे पर्वतीय क्षेत्रों में 90–100 क्विंटल/हैक्टेयर तथा शुष्क शीतोष्ण क्षेत्रों में 250 क्विंटल/हैक्टेयर के लगभग है।

कुफरी ज्योति

यह मध्य मौसमी किस्म है जो 130–150 दिनों में तैयार हो जाती है। इसके पौधे लम्बे, सीधे, शीघ्र बढ़ने वाले तथा मध्यम आकार के तथा फूल सफेद रंग के होते हैं। इसके पौधे व कन्द पछेता झुलसा रोग के लिए थोड़े रोग प्रतिरोधी है। यह अधिक उपज देने वाली किस्म है जो मैदानी क्षेत्रों के लिए भी उपयुक्त है परंतु हिमाचल प्रदेश के लिए बहुत उपयुक्त किस्म है। इसकी पैदावार 150–175 क्विंटल /हैक्टेयर है। इस किस्म को तैयार होने के बाद खेत में नहीं रहने देना चाहिए अन्यथा कन्दों का आकार बड़ा हो जाता है तथा दरारें पड़ जाती हैं जो कि इस किस्म का अच्छा गुण नहीं है।

आलू–राजमाश/मटर/फ्रासबीन अंतर फसल

लाहौल स्पिति में अधिक पैदावार लेने के लिये आलू–राजमाश/मटर/फ्रासबीन के 1:1 अंतर फसल अपनाने की सिफारिश की जाती है।

भूमि :

अच्छे निकास वाली, उपजाऊ दोमट मिटटी आलू की फसल के लिए सबसे उत्तम है यद्यपि अच्छे प्रबंध द्वारा इसे विभिन्न प्रकार की भूमियों में भी उगाया जा सकता है।

भूमि की तैयारीः

एक गहरी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से और 2–3 जुताईयां देसी हल से करनी चाहिए ताकि आलू की फसल के लिए अच्छे खेत बन सकें। खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। खेत समतल होना चाहिए ताकि जल निकासी सही हो सके।

खाद व उर्वरक :

तत्व (कि.ग्रा./है.)			उर्वरक (कि.ग्रा./है.)		
ना.	फा.	पो.	यूरिया	एसएसपी	एम ओ पी
120	80	60	260	500	100
			उर्वरक (कि.ग्रा./बीघा)		
			21	40	8

नोट : यदि गोबर की खाद उपलब्ध हो तो खेत तैयार करते समय 25 टन प्रति हैक्टेयर डालें और अच्छी तरह से मिट्टी में मिलायें।

फास्फोरस व पोटाश की सारी मात्रा व नाईट्रोजन की आधी मात्रा बिजाई के समय नालियों में दें और उसको मिट्टी से थोड़ा बहुत ढक दें और उसके बाद आलुओं की बिजाई करें ताकि उनका उर्वरकों के साथ सीधा सम्पर्क न हो। शेष नाईट्रोजन की आधी मात्रा पहली बार मिट्टी चढ़ाते समय दें। यदि गोबर की खाद की पूरी मात्रा (25 टन/हैक्टेयर) डाली हो तो फास्फोरस व पोटाश की मात्रा को 40 कि. ग्रा. प्रति हैक्टेयर कर देनी चाहिए।

बीज की तैयारी :

बिजाई के लिए अच्छे बीज की निम्नलिखित विशेषताएं होनी चाहिए :–

1. बीज शुद्व प्रजाति का होना चाहिए।
2. बीज स्वस्थ, रोग रहित, विषाणु, सूत्रकृमि तथा बैक्टीरिया से मुक्त होना चाहिए।
3. बीज अंकुरण की सही अवस्था में होना चाहिए।

कन्द के आकार के अनुसार इसे समूचे तथा छोटे टुकड़ों में काटकर बोया जा सकता है। यदि कन्द का आकार बड़ा हो तो इस प्रकार काटें कि प्रत्येक टुकड़े में कम से कम दो आंखे हों और प्रत्येक टुकड़े का भार 30 ग्राम से कम न हो। कटे हुए टुकड़ों को डाईथेन एम–45/इंडोफिल एम–45 (0.25%) के घोल से उपचार करने से अच्छी फसल व उपज प्राप्त होती है।

बिजाई का समयः

निचले पर्वतीय क्षेत्र (800 मीटर ऊंचाई तक)

पतझड़ वाली फसल : मध्य सितंबर–मध्य अक्तूबर

बसंत वाली फसल : जनवरी–फरवरी

मध्य पर्वतीय क्षेत्र (800–4600 मी.) : मध्य जनवरी

ऊंचे पर्वतीय क्षेत्र (1600–2400 मी.) : मार्च–अप्रैल

बहुत ऊंचे पर्वतीय क्षेत्र (2400 मी. से अधिक): अप्रैल–मई शुरू

बीज की मात्रा तथा बिजाई का ढंग :

आलू को 50–60 सैं. मी. की दूरी में नालियों/खालियों में ढलान की विपरीत दिशा में बोना चाहिए तथा बिजाई के तुरन्त बाद मेंढ़ें बनानी चाहिए। कन्द से कन्द का अंतर 15–20 सैं.मी. होना चाहिए। यदि बीज के आलुओं का भार 30 ग्राम से कम न हो तो 20–25 क्विंटल/हैक्टेयर बीज पर्याप्त होगा।

खरपतवारों की रोकथामः

आलु की फसल को जब खरपतवारों के साथ बढ़ना पड़ता है तो उपज में बहुत अधिक कमी आ जाती है। अतः यह आवश्यक है कि फसल को प्रारंभिक अवस्था में खरपतवारों से मुक्त रखा जाए। निराई–गुड़ाई उचित रूप से एवं कम खर्च से तभी हो सकती है यदि फसल की बिजाई पंक्तियों में की हो। पहली निराई–गुड़ाई फसल की 75% अंकुरण पर करनी चाहिए और यह अवस्था बिजाई के लगभग 30 दिनों के बाद आती है। जब पौधे 15–20 सैं.मी. लम्बे हो जाएं तो दूसरी निराई–गुड़ाई करके मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए।

खरपतवारों की रोकथाम रसायनिक विधि से भी की जा सकती है। निम्नलिखित खरपतवारनाशियों में से किसी एक का 700–800 लीटर पानी प्रति हैक्टेयर में प्रयोग किया जा सकता हैः

क्र.	खरपतवारनाशी	मात्रा (स.प.ग्रा/है)	प्रयोग का समय
1.	फलूक्लोरालिन (45 ई.सी. /बासालिन)	1.0	बिजाई से पहले
2.	आइसोप्रोटुरान (एरीलॉन/ग्रोमिनॉन 75 डब्लयू. पी.)	1.0	बिजाई के बाद (48 घंटे के अंदर)

सावधानियां :

1. बासालिन का प्रयोग शाम के समय करना चाहिए ताकि सूर्य की रोशनी से इसका वियोजन न हो।
2. छिड़काव के लिए फ्लैट फैन नॉजल का प्रयोग करें और एक स्थान पर बार बार छिड़काव न करें।
3. आलू की बसन्त कालीन फसल में जब 5% से अधिक पौधे न उगे हों (बिजाई के 35–40 दिन बाद) तो उगे हुए खरपतवारों के नियन्त्रण हेतु पैराक्वैट 600 ग्रा./है. (2.5 ली. ग्रामाक्सोन 24 डव्ल्यू एस. पी./700–800 लीटर पानी प्रति हैक्टेयर) की दर से छिड़काव करें।

जल प्रबन्धः

आलू की फसल में सिंचाई की संख्या एवं समय, मिटटी की बनावट, मौसम, फसल की वृद्धि की

अवस्था तथा उगाई गई किस्म पर निर्भर करती है। फिर भी कुछ क्रांतिक अवस्थाओं में जैसे कि भूमि के अंदर तने से भूस्तारी तथा आलुओं के बनते तथा बढ़ते समय सिंचाई करना बहुत आवश्यक होता है। अतः इन अवस्थाओं में पानी की कमी नहीं होनी चाहिए। हल्की और बार–बार सिंचाई देना भारी सिंचाई देने की अपेक्षा अच्छा है। मेंढ़ो तक खेतों में पानी भर देना हानिकारक है जबकि सिंचाई करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि नालियां पानी से आधी भरें ताकि मेढ़ों में पानी के रिसाव से स्वयं नमी आ जाये जो कि फसल की बढ़ौतरी के लिए सही है। प्रायः बसंत की फसल में 5–7 सैं.मी. गहराई की 5–6 सिंचाईयां पर्याप्त होती हैं।

घास पत्तियों का प्रयोग :

बसंत की फसल में घास–पत्तियों का प्रयोग 10 टन/हैक्टेयर की दर से करना आवश्यक है ताकि भूमि में पर्याप्त नमी व सिंचाई का सही उपयोग हो सके। इससे सिंचाई के पानी का बचाव होता है और साथ में आलुओं के आकार में वृद्धि होती है जिससे उपज में बढ़ौतरी होती हैं।

फसल की खुदाई एवं श्रेणीकरण :

जब फसल पूरी तैयार हो जाए तो आलुओं की खुदाई करनी चाहिए। आलुओं के तैयार हो जाने पर उन्हें भूमि के अंदर देर तक नहीं रहने देना चाहिए। खुदाई के समय भूमि न सूखी न अधिक गीली होनी चाहिए। पौधों की शाखाओं का थोड़ा सूखना तथा रगड़ने पर आलू के छिलके का न निकलना फसल तैयार होने के संकेत देते हैं। आलू का निम्नलिखित विधि से श्रेणीकरण किया जा सकता है :–

ए श्रेणी (बड़ा आकार)	:	75 ग्राम से अधिक भार वाले
बी श्रेणी (मध्यम आकार)	:	50–75 ग्राम भार वाले
सी श्रेणी (छोटा आकार)	:	50 ग्राम से कम भार वाले

पौध संरक्षण :

आक्रमण/लक्षण	रोकथाम
(1) कीट	गेहूं की तरह
सफेद सुंडी, कटुआ कीट व वॉयर वर्मः कटुआ पौधों को जमीन की सतह से काट देता है जबकि सफेद सुंडी व वॉयर वर्म आलुओं को खाते हैं।	1. भृंगों एवं सुंडियों के लिए एकीकृत रोकथाम प्रणाली अपनाएं। **2. व्यस्क भृंग की रोकथाम एवं प्रबंध :** भृंग मई–जून के महीने में जमीन से बाहर निकलना शुरू हो जाते हैं। ये शाम के समय अंधेरा होते ही हजारों की संख्या में जमीन से बाहर निकलते हैं और पूरी रात पौधों के पत्तों को खाते रहते हैं। जिन पौधों पर भृंग इक्ट्ठे होते हैं उन पर मौनसून आरम्भ होते ही 750 मि.ली. डायमैथोएट 30 ई.सी. (रोगर, सी.पी.आर.आई. द्वारा अनुमोदित) से छिड़काव करें। मौनसून के आरंभ होने तथा भंगों के निकलने

	के 3–4 दिन के अन्दर सभी आस–पास के पौधों पर भी छिड़काव कर देना चाहिए। यदि मौनसून के आरम्भ होने से पहले ही भृंग निकल जाएं तो 2 छिड़काव देने चाहिए–पहला, मौनसून आरम्भ होने से पहले व दूसरा मौनसून उतरने पर ज्यादातर भृंग जून के दूसरे सप्ताह में निकलते हैं। इसलिए कीटनाशी रसायनों का छिड़काव जून के दूसरे सप्ताह में करें। **3. यांत्रिक** : रोकथाम के लिए पौधों को हाथ से हिलाना चाहिए व बांस के साथ लगाए गए हुक से हिलाना चाहिए ताकि भृंग जमीन पर गिरें और फिर उन्हें मिट्टी के तेल व पानी के मिश्रण में डालकर मार दें। यह काम रात के समय 8.30 से 11.30 के मध्य करना चाहिए। भृंगों की संख्या के आधार पर यह काम 4–7 दिन लगातार करना चाहिए। यदि कीट–ग्रस्त खेत के निकट कोई ऐसे पौधे हों जिन पर भृंग पलते हों उन पर कीटनाशी दवा का छिड़काव करें । 4. **सुंडियों की रोकथाम एवं प्रबंधः** बिजाई से पहले खेत में फोरेट 10 जी (थिमेट) या कार्बारिल 4 जी (सेवीडाल) या फयुराडॉन 3 जी (कार्बोफ्यूरान) या क्वीनालफास 5 जी को 2500 ग्रा./है. डालें। इनमें से फोरेट 10 जी. ज्यादा असरदार है। जुताई करते समय जो सुडियां दिखाई दें उन्हें इकट्ठा करके नष्ट कर दें। गुड़ाई के समय, जून के प्रथम सप्ताह में 4 ली. क्लोरपाईरोफॉस 20 ई.सी.. (दरसवान/ मासवान/ 800 ग्रा.स.प / है. क्बीनालफास 25 ई.सी. 4000 मि.ली./ है. को खेत में डालें। दवाई को अच्छी तरह से रेत में मिला कर खेत में बिखेर दें और उसके बाद मिट्टी चढ़ा दें। जब दवाई डालें, उस समय खेत में अच्छी नमी होनी चाहिए।
आलू का पतंगा (पी.टी.एम.): लार्वे पौधों, खेतों में जमीन से बाहर निकले आलुओं और गोदाम में आलुओं को हानि पहुंचाते हैं। यह पत्तों में सुरंगे बनाते हैं व तने के अंदर चले जाते हैं। गोदामों में लार्वे आलुओं पर आंखों के रास्ते अंदर चले जाते हैं व सुरंगे बना देते हैं। आलू के अंदर जाने के रास्ते के बाहर मल का	1. फसल की बिजाई के लिए स्वस्थ बीज का प्रयोग करें। 2. मेंढ़ों पर मिट्टी पूरी चढ़ाएं ताकि आलू बाहर न दिखाई दें। 3. आलुओं की खुदाई के बाद खेत में उन पर तरपाल/चादर ढक दें ताकि पतंगें उन पर अंडे न दे सकें।

इक्ट्ठा होना इसका लक्षण है। उसके बाद अन्य जीवाणुओं के आक्रमण द्वारा आलुओं में सड़न शुरू हो जाती है।	**सावधानियां :** 1. खाने वाले आलुओं पर किसी भी प्रकार के कीटनाशी का प्रयोग न करें।
हड्डा बीटल : व्यस्क कीट व शिशु पत्तों को छलनी कर देते हैं।	भृंग के अण्डों व सुंडियों को इक्टठा कर के नष्ट करें।
जैसिड और एफिड : पत्तों व फूलों से रस चूसकर हानि पहुंचाते हैं और विषाणु रोग फैलाते हैं।	750 मि.ली. मिथाइल डैमिटान (मैटासिस्टाक्स 25 ई.सी.) या डाईमिथोएट (रोगर 30 ई.सी.) को 750 ली. पानी में मिला कर प्रति हैक्टेयर छिड़काव करें।
(2) बिमारियां	
अगेता झुलसा : पत्तों पर गोल चक्र रूप में भूरे धब्बे बनते हैं जिसके कारण अधिक बिमारी होने पर पत्ते शीघ्र गिर जाते हैं।	1. फसल पर बिमारी के आते ही जिनेव/ मेन्कोजेब (डाईथेन जैड–78/ इंडोफिल जैड–78) (0.2%) या डाईथेन एम–45/ इंडोफिल एम–45 (0.2%) या मैटामिल 0.25% (मैटालैक्सिल 8% मैन्कोजैव 64%) का 15 दिन के अंतर पर छिड़काव करें। 2. फसल में अगेता झुलसा व सरकोस्पोरा पता धब्बा बीमारी के लक्षण आते ही या बिजाई के 40 दिन बाद प्रोपिनेब (एन्ट्राकोल 75 डब्ल्यू. पी. 0.25%) का छिड़काव करें। 15 दिन के अन्तराल पर एक और छिड़काव करें।
पछेता झुलसा : छोटे काले धब्बे पत्तों पर आते हैं जो बढ़ते जाते है और कुछ दिनों में सारे पौधों को मार देते हैं। यदि बारिशें लगातार होती रहें तो उपज में बहुत कमी आ जाती है।	1. बिजाई के लिए स्वस्थ बीज का प्रयोग करें। 2. ऊची मेंढ़े बनाएं ताकि भूमि में आलुओं को बिमारी न लगे। 3. फसल पर बिमारी के आते ही रिडोमिल एम. जैड. 72 डब्ल्यू. पी. या मैटामिल 0.25% मैटालैक्सिल 8%. मैन्कोजैव 64%) से 15 दिन के अंतर पर दो बार छिड़काव करें और उसके बाद 7 दिन के अंतर पर इंडोफिल एम–45 (0.25%) से 4 छिड़काव और करें।
फोमा झुलसा : इसके प्रथम लक्षण पत्तों पर छोटे, गोल बिंदुओ की तरह धब्बे बनते हैं। बिमारी वाले भाग के चारों और पीलापन बनता है और उसके बाद भूरे से गहरे भूरे धारियों वाले गोल धब्बे बनते हैं।	पछेता व अगेता झुलसा बिमारियों की तरह।

कार्मन स्कैब: रोग ग्रस्त आलुओं का छिलका भद्दा हो जाता है और उसमें गहरे छेद पड़ जाते हैं। आलुओं पर भूरे से काले कार्क की तरह धब्बे बन जाते हैं।	1. स्वस्थ व रोग रहित बीज का प्रयोग करें। 2. बिजाई के समय बीज के आलुओं को थीरम के घोल (0.25%) (25 ग्रा. थीरम 10 लीटर पानी) में 30 मिनट तक उपचार करें। 3. किसान खाद के स्थान पर अमोनियम सल्फेट खाद का प्रयोग करें।
ब्लैक स्कर्फ : आलुओं से उगती हुई शाखाएं मर जाती हैं। भूमि के अंदर वाले भागों में कैंकर जैसी बढ़ौतरी बनती है और आलुओं पर भूरे काले बिमारी के अंश प्रकट होते हैं।	बीज के आलुओं को बोरिक एसिड (फार्मास्यूटिकल ग्रेड) (3%) के घोल में 30मिनट के लिए या एगालॉल (0.5%) के घोल में 30 मिनट या एसिटिक एसिड (1%. जिन्क सल्फेट 0.05%) के घोल में 15 मिनट के लिए उपचार करें। इन घोलों को आलुओं के उपचारके लिए 20 बार प्रयोग में लाया जा सकता है।
पाऊडरी स्कैब : आरंभ में आलुओं पर उभरी हुई कीलें प्रकट होती हैं। बाद में गड्ढे/छेद बन जाते हैं जिनके अंदर फफूंद भर जाती है जो पतले छिलके से घिरे रहते है।	1. बिजाई के लिए स्वस्थ बीज का प्रयोग करें। 2. रोग ग्रस्त खेतों में फसल न लगाएं 3. बीज का थीरम (0.25:) के घोल में 30 मिनट तक उपचार करें।
बैक्टीरियल विल्ट : इस बिमारी के प्रमुख लक्षण पौधों व पत्तों का मुरझा कर नीचे झुकना है जिससे बाद में पूरा पौधा मुरझा जाता है और आलुओं के अंदर भूरापन आ जाता है।	1. मक्की व अन्य फसलों के साथ फसल– चक्र अपनाएं। 2. बिजाई के समय मेंढ़ों पर मिट्टी अच्छी तरह से चढ़ाएं। 3. बिजाई के लिए रोग–रहित बीज का प्रयोग करें।
विषाणु रोग (पी.वी.वाई.): पत्तों के हरे रंग के बीच हल्के भूरे रंग के धब्बे बनते हैं। प्रायः पत्तों पर हल्के निर्जीव धब्बे प्रकट होते हैं। पौधे छोटे रह जाते हैं।	1. प्रमाणित बीज ही प्रयोग करें। 2. फसल में 750 मि.ली. मिथाइल डेमिटान (मैटासिस्टाक्स 25 ई.सी.) का 750 ली. पानी में प्रति हैक्टेयर छिड़काव करें। 3. जहां तक संभव हो, मध्य अगस्त तक फसल में ऊपर के भागों को काट दें।

चारे वाली फसलें

हिमाचल प्रदेश की प्राकृतिक चरागाहें पशुओं के चारे का मुख्य स्त्रोत हैं। प्रदेश में कुल 32 लाख हैक्टेयर भूमि पशुओं के चरने के लिए उपलब्ध है जो कि प्रदेश के कुल भौगोलिक क्षेत्र के 56.7% के लगभग है। यह चरागाहें 300–4800 मीटर ऊंचाई तक के क्षेत्रों में फैली हुई हैं जहां की जलवायु शीतोष्ण से समशीतोष्ण के मध्य रहती है। इन क्षेत्रों से 10–50 क्विंटल प्रति हैक्टेयर सूखा घास प्राप्त होता है, यदि चरागाहों की उचित प्रबन्ध द्वारा देखरेख हो तो इसे 100 क्विंटल/ हैक्टेयर तक बढ़ाया जा सकता है। इन चरागाहों में वनस्पतिक बढ़ोतरी एक साल में केवल 4–5 महीने होती है जिसके कारण बाकी समय में हरे चारे की बहुत कमी हो जाती है। प्रदेश में कुल 8000 हैक्टेयर क्षेत्र ही चारे की फसलें उगाने के लिए उपलब्ध है। चारे की पैदावार बढ़ाने और हरे चारे की पूरे साल उपलब्धता बनाए रखने के लिए यह जरूरी है कि चारे की उन्नत किस्मों के अंतर्गत क्षेत्र बढ़ाया जाए। प्राकृतिक चरागाहों से अधिक घास प्राप्त करने के लिए उनके प्रबंध एवं सुधार के लिए विशेष ध्यान देना पड़ेगा। मौनसून के मौसम में चरागाहों से आवश्यकता से अधिक घास को साइलेज के रूप में परिक्षण करना चाहिए ताकि इसका प्रयोग उस समय किया जा सके, जब घास की कमी हो ।

क प्राकृतिक चरागाहों का प्रबन्ध एवं सुधार

प्रदेश में चरागाहें अधिकतर ढलानों तथा पथरीली जमीनों पर हैं, साथ ही इनके सुधार एवं प्रबंध पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है जिस कारण इनका उत्पादन भी बहुत कम है। इनको सुधारने के लिए निम्नलिखित सिफारिशों का अनुमोदन किया गया हैः

1. चरागाहों में ठीक ढंग से कटाई तथा चराई का प्रबंधः

यद्यपि घास को बार–बार काटा जा सकता है लेकिन इन्हें भी अन्य हरे पौधों की तरह अपनी खुराक बनाने के लिए पत्तों पर ही निर्भर रहना पड़ता है। अतः सही ढंग से काटने या चराने से ही अधिक चारा मिल सकता है। दूसरा यदि घासों को अधिक समय तक बढ़ने दिया जाए तो घास की पौष्टिक शक्ति कम हो जाती है क्योंकि फसल की बढ़ौतरी के साथ प्रोटीन की मात्रा कम होती जाती है। यह प्रयत्न करना चाहिए कि बरसात के मौसम के समाप्त होते ही चरागाहों से घास काटकर उसे सूखे घास में परिवर्तित कर लेना चाहिए। यदि चरागाहों की कटाई उस समय की जाए जब घासें पक गई हों तो इनमें पौष्टिकता बहुत कम रह जाती है। चरागाहों से बढ़िया हरा घास प्राप्त करने के लिए इनमें खादों का प्रयोग करना चाहिए तथा दो बार घास काटना चाहिए।

चरागाहों एवं जंगलों में पशुओं को अधिक नहीं चराना चाहिए क्योंकि एक तो वहां उगने वाली किस्मों का विनाश हो जाता है और दूसरा घास भी कम होने लगता है। चूंकि सारे क्षेत्र में पशुओं को चरने से रोकना संभव नहीं होगा क्योंकि ऐसा करने के लिए कोई दूसरा क्षेत्र उपलब्ध नहीं है, अतः एक क्षेत्र में चरना बंद कर देना चाहिए और दूसरे क्षेत्र में चरना जारी रखना चाहिए। यह विधि बारी–बारी चरागाहों में अपनानी चाहिए। ऐसा करने से घासों को बढ़ने में पूरा समय मिल सकेगा। यह और भी अच्छा होगा कि एक क्षेत्र में घास काटना या चराना नहीं चाहिए जब तक घासों से बीज न झड़ गए हों

जिससे फिर घास पैदा होने में सहायता मिलेगी।

2. चरागाहों से झाड़ियों व दूसरे पौधों का उन्मूलन

उन चरागाहों में जहां कोई ध्यान न दिया गया हो, वहां कैक्टस, फूलणू, बारबेरी, गाजर घास जैसी झाड़ियां अधिक संख्या में पैदा हो जाती हैं। यह पौधे जमीन से नमी व खुराक प्राप्त करने के लिए घासों के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं जिससे घासों के उत्पादन में प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः यह आवश्यक है कि चरागाहों से ऐसी झाड़ियों का उन्मूलन कर दें। इनके उन्मूलन के लिए परिशिष्ट–6 में दी गई विधियों को अपनाएं।

3. चरागाहों में उर्वरकों का प्रयोगः

वास्तव में चरागाहों में पशुओं द्वारा मल–मूत्र व गोबर ही खाद के रूप में प्राप्त होते हैं और इसके अतिरिक्त किसी भी प्रकार की खाद चरागाहों को नही मिलती है। अतः इनमें अंततः तत्वों की कमी हो रही है जिससे घास के उत्पादन में बहुत कमी आ गई है। दूसरा फलीदर फसलें भी इन चरागाहों में नहीं होती हैं जो भूमि में नाईट्रोजन बढ़ाने की क्षमता रखती हैं। जैसे ही घास की पैदावर कम होती है तो उगने वाले घासों की प्रजातियों में बढ़ने की होड़ खत्म हो जाती है और तब कम उपजाऊ भूमि में उगने वाले पौधे इन चरागाहों में पैदा होकर फैलने लगते हैं। नाइट्रोजन फास्फोरस, पोटाश, सल्फर, चूना व मैगनीशियम चरागाहों में उगने वाले घासों के लिए आवश्यक हैं। इनके अतिरिक्त मोलीबडीनम, कॉपर, जिंक, मैंगनीज, बोरान व लोहा तत्व भी कम मात्रा में आवश्यक हैं। किसी भी चरागाह के लिए खादों की पर्याप्त मात्रा, इनकी स्थिति, प्राकृतिक दशा व मिट्‌टी परीक्षण के आधार पर निर्भर करती है।

80 कि. ग्रा. नाईट्रोजन और 60 कि. ग्रा. फास्फोरस प्रति हैक्टेयर देने से सामान्य ढलान वाले मध्यवर्ती क्षेत्रों में घास की पैदावार में 200 प्रतिशत तक वृद्धि पाई गई है। नाईट्रोजन खाद देने से घास में प्रोटीन की मात्रा बढ़ती है। प्राकृतिक चरागाहों में खाद डालते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि यदि ढलान बहुत अधिक हो तो खाद पहाड़ी की ऊँची तरफ से देनी चाहिए। जब बरसात से पहले की बारिशें हो तो उस समय खाद चरागाह में देनी चाहिए। नाईट्रोजन खाद को बराबर भागों में बांट कर 2–4 बार देने से अधिक पैदावार होने की संभावना रहती है।

4. चरागाहों में फलीदार फसलें लगानाः

हिमाचल प्रदेश में पशु फसलों की तूड़ी और सूखे घास पर निर्भर रहते हैं जिससे उन्हें शक्ति तो मिलती है परंतु पचने योग्य प्रोटीन नहीं मिलती है। ऐसी खुराक न मिलने के कारण देसी व विदेशी पशुओं की प्रजनन क्षमता व बढ़ोतरी में कमी आती है। तूड़ी व सूखे घास को प्रोटीन युक्त खलों या फलीदार फसलों के साथ मिलाकर खिलाया जा सकता है। प्रदेश की चरागाहों में फलीदार फसलें बिल्कुल ही कम पाई जाती हैं। फलीदार फसलें लगाने से घास प्रोटीनयुक्त व अन्य आवश्यक तत्वों वाला प्राप्त होगा। नीचे दी गई फलीदार फसलों को प्रदेश के विभिन्न भागों में फैली चरागाहों में लगाया जा सकता है।

फलीदार फसल	बीज की मात्रा (कि.ग्रा./है.)
क्षेत्र–1	
सिराट्रो	6–8
रौंगी	30
वैलवैट बीन	30
क्षेत्र–2	
फील्ड बीन	6–8
व्हाईट क्लोवर	3–5
रैड क्लोवर	10–12
क्षेत्र–3	
रैड क्लोवर	10–12
व्हाईट क्लोवर	3–5
क्षेत्र–4	
रिजका (लुसर्न)	15
व्हाईट क्लोवर	3–5
रैड क्लोवर	10–12

इन फलीदार फसलों को सुचारू ढंग से स्थापित करने के लिए आवश्यक है कि बीज को सही टीके (राईजोवियम कल्चर) से उपचारित करें और 60 कि. ग्रा. फास्फोरस व 100 ग्रा. मोलीवडीनम तत्व प्रति हैक्टेयर दें। कुछ स्थानों पर इनकी अच्छी स्थापना व बढ़ौतरी के लिए मैगनिशियम व बोरान तत्वों का देना भी आवश्यक है।

विधिः

15 सै. मी. व्यासार्ध व 20 सै.मी. के गहरे गडढे करें और सब प्राकृतिक घासों को चरागाहों से निकाल दें। इन गड्ढों में उवर्रकों को अच्छी तरह से मिलाएं व फिर बीज को बिखेर कर मिट्टी में मिला दें। यह बिजाई क्षेत्र–2 में जून के अंत, क्षेत्र–3 में अक्तूबर व क्षेत्र–4 में अप्रैल में करें।

5. चरागाहों में उन्नत किस्म की घासें लगाएंः

कमजोर चरागाहों व घासनियों, बंजर और ऊसर जमीनों में अधिक उपज देने वाली तथा पौष्टिक घासें लगाने से घास के उत्पादन में ही वृद्धि नहीं होती बल्कि हरे चारे की उपलब्धि 3–4 महीने से बढ़कर 7–8 महीने हो जाती है। विभिन्न क्षेत्रों में निम्नलिखित घासें उगाने के लिए उपयुक्त पाई गई है :

क्षेत्र–1 व क्षेत्र–2

नेपियर बाजरा हाईब्रिड (एन. वी.–37) ,

सिटेरिया (एस.–18, एस.–92)

क्षेत्र–3

आरचर्ड ग्रास (कोमैट)

फैस्कयू (हिमा–1 व हिमा–4, हिमा–14, ई.सी.178182)

क्षेत्र–4

आरचर्ड ग्रास (कोमैट)

फैस्कयू (हिमा–1 व हिमा–4)

बिजाई का तरीका :

नई घास की जड़ें कमजोर होती हैं और स्थापित होने में अधिक समय लगाती हैं। कई बार तो छाया के कारण अथवा पहले से ही उग रही घासों द्वारा समाप्त कर दी जाती हैं। अतः यह आवश्यक है कि पहले इनकी नर्सरी में बिजाई करें और फिर दूसरे वर्ष पौध को खेतों में लगाएं। पतली घासों को मिट्‌टी के साथ ही झुंड में लगा दें जबकि मोटी घासों जैसे नेपियर बाजरा हाईब्रिड में एक एक पौध को लगाया जा सकता है। 30 सै. मी. की दूरी की पंक्तियों में पौध को 20 सैं मी. के फासले पर लगाएं। उन क्षेत्रों में जहां पौध को पंहुचाना कठिन हो, वहां पर गोलाकार गडढे में बिजाई करने वाली विधि अपनानी चाहिए।

6. चरागाहों में चारे वाले वृक्ष लगाना :

चारे वाले वृक्षों व झाडियों से उस समय हरा चारा प्राप्त होता है जब दूसरी घासें सूख गई होती हैं या निद्रतावस्था में होती हैं। कमी वाले समय में चारा देने के अतिरिक्त इनका कृषि योग्य भूमि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है क्योकि इनको बंजर भूमि, चरागाहों और खेत की मेंढ़ो पर ही लगाया जाता है और उसके बाद इनकी बहुत कम देखभाल करनी पड़ती है। प्रदेश के विभिन्न खंडों के लिए कुछ चारे वाले वृक्ष निम्नलिखित हैं :

क्षेत्र या खण्ड–1 :–ढयिूं, कचनार, खैर, लसूडा, बांस, बेर, ल्यूसिनिया, शहतूत, ब्यूल

क्षेत्र या खण्ड–2 :–कचनार, ब्यूल, खिड़क, बांस, शहतूत, रोबिनिया

क्षेत्र या खण्ड–3 :–रोबिनिया, पॉपलर, खिड़क

क्षेत्र या खण्ड–4 :–विलो, पॉपलर (तिलन्जना), इंडियन पॉपलर, रोबिनिया

ख चारे वाली फसलें :

बरसीम

बरसीम एक वार्षिक फलीदार चारे वाली फसल है। यह 1200 मीटर से निचले सिंचित इलाकों के लिए एक अत्याधिक उपयोगी चारे वाली फसल है। यह बढ़ौतरी की हर अवस्था में रसदार व नर्म रहती है। इसे जल–निकासी वाली भूमियों में व असिंचित इलाकों में जहां भूमि में पानी की सतह ऊपर

है, में भी उगाया जा सकता है।

अनुमोदित किस्में :

मैसकावी

यह जल्दी बढ़ने वाली किस्म है और पौधे की 75 सैं.मी. लंबाई फूल आने पर पहुंच जाती है। यह लगभग 500–600 क्विंटल हरा चारा और 100–125 क्विंटल सूखा चारा प्रति हैक्टेयर पांच कटाईयों में देती है। इसमें 20% प्रोटीन (सूखे पदार्थ के आधार पर) फूल आने की प्रारंभिक अवस्था में पाई जाती है।

बी.एल.–1

यह मैसकावी किस्म की अपेक्षा अधिक देर तक बढ़ने वाली किस्म है। इसलिए इससे जून के अंत तक अतिरिक्त कटाई ली जा सकती है। यह 600 क्विंटल हरा चारा व 130 क्विंटल सूखा चारा प्रति हैक्टेयर के लगभग देती है।

बी.एल.–22

यह भी अधिक देर तक बढ़ने वाली किस्म है जिससे जून में एक अतिरिक्त कटाई ली जाती है। यह 750 क्विंटल हरा चारा प्रति हैक्टेयर के लगभग देती है।

भूमि व इसकी तैयारी :

यह हल्की से भारी किस्म की भूमि में अच्छी तरह से पैदा हो जाती है तथा लवण सहनशील भी है। अच्छी तरह से तैयार किए हुए व खरपतवार रहित समतल खेत इसकी खेती के लिए उपयुक्त होते हैं।

बिजाई का समय :

मध्य सितंबर से अक्तूबर के पहले सप्ताह तक इसकी बिजाई का उत्तम समय है। यदि मध्यवर्ती क्षेत्रों में बिजाई के लिए देरी हो जाए तो पहली कटाई लगभग तीन महीनों के बाद मिलती है।

बीज की मात्रा एवं बिजाई का ढंग :

खेत में खड़े पानी में 25 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर की दर से छट्टा देना चाहिए। ध्यान रहे कि बीज में अन्य खरपतवारों, विशेषकर कासनी के बीज न हों। इसके बचाव के लिए बरसीम के बीज को एक प्रतिशत नमक के घोल में डालना चाहिए और तैरते हुए बीजों को निकाल कर नष्ट कर दें। यदि मैसकावी किस्म व टैटरापलाईड बरसीम के मिश्रण की बिजाई न की जा रही हो तो 500 ग्राम जापानी सरसों का बीज बरसीम के बीज में मिलाना चाहिए ताकि पहली कटाई में अधिक पैदावार मिल सके। इसी प्रकार बरसीम व जई को 50:50 के अनुपात में बीजने से भी अधिक पैदावार मिलती है। खड़े धान की फसल में बरसीम की खेती लेने के लिए धान की कटाई से 8–10 दिन पहले बीज खेत में डालना चाहिए।

राईजोबियम से टीका करना :

यदि बरसीम की किसी खेत में पहली बार बिजाई की जा रही हो तो बीज को टीका (राईजोबियम कलचर) लगा लेना चाहिए जो फसल की बढ़ोतरी के लिए आवश्यक है। इसके लिए गुड़

का 10% घोल तैयार कर उबाल लें और फिर कमरे के तापमान के अनुसार ठंडा कर लें। गुड़ के घोल को बीज के ऊपर छिड़क दें ताकि उनमें नमी आ जाए। फिर इन बीजों के ऊपर टीके की पतली तह बिछा दें व अच्छी तरह मिला दें। इन बीजों को छाया में सुखा कर बिजाई करें।

खाद व उर्वरक :

बिजाई के समय 25 कि. ग्रा. नाईट्रोजन व 60. किग्रा. फास्फोरस प्रति हैक्टेयर भूमि में डालें। इसके अतिरिक्त गोबर की खाद 10 टन प्रति हैक्टेयर डालें।

सिंचाई :

पहली सिंचाई बहुत महत्वपूर्ण है और बिजाई के एक सप्ताह बाद देनी चाहिए। इसके बाद अन्य सिंचाईयां मौसम की स्थिति को देखकर 15–20 दिन के अंतराल पर करें।

कटाई :

पहली कटाई बिजाई के लगभग 60 दिनों के बाद की जाती है और उसके बाद 25–30 दिनों के अंतर पर कटाई करनी चाहिए। मध्यवर्ती क्षेत्रों में इसे सर्दी के मौसम में 50–60 दिनों के अंतर पर काटा जाता है और इस प्रकार 5–6 कटाईयां मिल जाती हैं।

बीज तैयार करना :

यदि फसल को बीज के लिए रखना हो तो फरवरी के अंत के बाद कटाई बंद कर देनी चाहिए। कासनी व अन्य खरपतवारों को निकाल देना चाहिए। बीज के बनने एवं पकने के समय तक बराबर सिंचाईयां देनी चाहिएं। लगभग 2.5 क्विंटल बीज प्रति हैक्टेयर प्राप्त किया जा सकता है।

शफतल

शफतल एक वार्षिक फलीदार चारे वाली फसल है जो कि कुल्लू, मण्डी, शिमला व चम्बा जिलों के शीतोष्ण क्षेत्रों व अम्लीय भूमियों के लिए उपयुक्त है जहां बरसीम की फसल की पैदावार ठीक नहीं होती है।

अनुमोदित किस्में :

एस.एच.–48

इसके पत्ते गोल व गहरे हरे रंग के होते हैं, तना पतला व खोखला व जिसके छोटे ठोस व स्पंजी सिरे पर छोटे–छोटे सफेद फूल लगते हैं जो पकने पर गुलाबी हो जाते हैं। इसमें 25–27% प्रोटीन (शुष्क पदार्थ) होती है। दुधारू पशुओं के लिए बहुत पौष्टिक है। क्योंकि इस फसल को पानी की कम आवश्यकता होती है, अतः इसे बारानी खेती के लिए भी उगाया जा सकता है। इसकी 5–6 कटाईयों में 700–800 क्विंटल /हैक्टेयर हरा चारा प्राप्त होता है व 120–130 क्विंटल/हैक्टेयर सूखा घास प्राप्त होता है। यह सावधानी रखें कि पशुओं में (ब्लोट) बिमारी न हो, इसलिए इसको जई के साथ मिश्रित रूप में उगाना चाहिए।

बीज की मात्रा :

15 किग्रा. / हैक्टेयर

सस्य क्रियाएं :

बरसीम फसल की तरह

उर्वरक :

चारे की अधिक पैदावार लेने के लिए 25 कि. ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. पोटाश व फास्फोरस की 60 किग्रा. हैक्टेयर मात्रा देनी चाहिए। परंतु बीज की अधिक उपज लेने के लिए बिजाई के समय 25 कि. ग्रा. नाईटोजन और 30 कि. ग्रा. पोटाश के साथ 90 कि. ग्रा. फास्फोरस की मात्रा प्रति हैक्टेयर देनी चाहिए।

कटाई :

यदि चारे व बीज दोनों की उपज साथ में लेनी हो तो पहली कटाई दिसंबर व दूसरी कटाई फरवरी में लेने के बाद फसल को बीज की उपज लेने के लिए छोड़ देना चाहिए। यदि केवल चारे की फसल लेनी हो तो कटाइयां दिसंबर, मार्च के आरंभ में, अप्रैल और मई में लेनी चाहिए।

रिजका (लुसर्न)

यह एक बारह मासी फलीदार चारे की फसल है जो ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों के असिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। बरसात के मौसम या जब तापमान बिल्कुल नीचे या जमाव बिंदु से नीचे होने के समय के अतिरिक्त, फसल की सारे वर्ष अच्छी बढ़ोतरी होती है। यह मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाता है जो लगातार खेती के कारण कमजोर हो गई हो।

अनुमोदित किस्में :

आनन्द–3

इसके गहरे हरे रंग के 3 पत्ती वाले पत्ते होते हैं जिसका तना मध्यम मोटा, जड़ें गहरी और प्रत्येक पौधे में 10–15 दौजियां निकलती हैं। इसके फूल नीले रंग के और जल्दी–जल्दी आने की क्षमता रखते हैं। इसमें शुष्क पदार्थ के आधार पर 23–24 प्रतिशत प्रोटीन होती है तथा अधिक पौष्टिक भी है। इससे लगभग 400–500 क्विंटल हरा चारा 5–6 कटाईयों में प्राप्त होता है।

भूमि :

गहरी तथा अच्छे जल निकास वाली दोमट भूमि इसके लिए सबसे अच्छी है। यह फसल अम्लीय भूमि में पैदा नहीं हो सकती। अतः जिस भूमि की पी एच–6.5 से नीचे हो, उसमें चूना मिलाना चाहिए। चूने के लिए मिट्टी की अम्लीयपन के लिए परीक्षण करना चाहिए तथा बिजाई से महीना पहले चूना मिट्टी में मिला देना चाहिए।

बिजाई का समय :

अक्तूबर के पहले पखवाड़े से नवंबर के अन्त तक इसकी बिजाई के लिए उत्तम समय माना गया है।

बीज की मात्रा एवं बिजाई का ढंग :

15 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर पर्याप्त है। पंक्तियों में 40 सैं. मी. का अंतर होना चाहिए। इसका बाहर का छिलका मोटा होता है अतः बीज को बिजाई से पहले रात भर के लिए भिगोकर रखें। बरसीम की तरह इसमें भी राइजोवियम टीका करना चाहिए यदि किसी खेत में पहली बार इस फसल को लगाया जा रहा है।

खाद व उर्वरक :

बिजाई के समय 25 कि.ग्रा. नाईट्रोजन व 60 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति हैक्टेयर डालनी चाहिए। यदि भूमि अम्लीय हो तो बिजाई से एक महीना पहले, मिट्टी परीक्षण के आधार पर, चूना मिला देना चाहिए।

सिंचाई :

बिजाई के लगभग एक महीने के बाद सिंचाई कर देनी चाहिए और इसके बाद मौसम के अनुसार 15–30 दिन के अंतर पर सिंचाई करनी चाहिए। बरसात के मौसम में पानी को खेत में खड़ा नहीं रहने देना चाहिए।

कटाई :

नई उगाई गई फसल लगभग 2–4 महीनों में पहली कटाई के लिए तैयार हो जाती है जो क्षेत्र के आधार पर निर्भर करती है। उसके बाद 30–40 दिनों के अंतर पर कटाई ली जा सकती है।

बीज तैयार करना

यदि फसल को चारे के लिए न काटा गया हो तो बीज की अच्छी उपज मिलती है। यदि फसल से बीज प्राप्त करना हो तो जनवरी के बाद कटाई नहीं करनी चाहिए। लगभग 50 किग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर प्राप्त होता है।

जई

जई को रबी के मौसम में सिंचित एवं बारानी खेती में चारे के लिए सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। जई का चारा बहुत पौष्टिक होता है और इसमें 50% फूल आने पर लगभग 7.6% और बढौतरी की प्रारंभिक अवस्था में 14.6% प्रोटीन की मात्रा होती है। यदि सिंचाई की पूरी व्यवस्था हो तो जनवरी के आरंभ से यह तीन कटाईयां देती हैं उस समय हरे चारे की बहुत कमी भी होती है।

अनुमोदित किस्में

पालमपुर–1

यह मध्य मौसमी पकने वाली किस्म है जो 50 प्रतिशत फूल आने पर 115 सै.मी. लंबी होती है।

यह अवस्था 145 दिनों में आती है। इसके पत्ते चौड़े व गहरे हरे रंग के होते हैं। इसमें एक समान दौजियां निकलती हैं और एक पौधे में लगभग 15 दौजियां होती हैं। इससे 500 क्विंटल प्रति हैक्टेयर हरा चारा प्राप्त होता है। बीज की फसल लगभग 190 दिनों में तैयार हो जाती है।

कैन्ट

यह शीघ्र तैयार होने वाली किस्म है जिसमें लगभग 125 दिनों में फूल आ जाते हैं। इसकी दौजियां व पौधों की लंबाई सामान्य है व पत्ते भी मध्यम आकार के होते हैं। यह लगभग 360 क्विंटल हरा चारा प्रति हैक्टेयर देती है व बीज की फसल 180 दिनों में तैयार हो जाती हैं।

भूमि

जल निकासी न होने वाली भूमि को छोड़कर सभी प्रकार की भूमियों में इसे उगाया जा सकता है।

बिजाई का समय

इसकी बिजाई मध्य सितंबर से मध्य दिसंबर तक की जा सकती है ।

बीज की मात्रा एवं बिजाई का ढंग :

100 किग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर 25 सैं. मी. दूरी की कतारों में बीजना चाहिए। बीज को वीटावैक्स (2 ग्रा./कि.ग्रा) से उपचार करना चाहिए ताकि कांगियारी (कवर्ड स्मट) से बचाव हो जाये । बारानी परिस्थितियों में यदि जई को 20 सैं. मी. की दूरी की पंक्तियों में लगाया जाये और बीच में सरसों के बीज का छट्टा दिया जाये तो चारे की अधिक उपज मिलती है।

खाद व उर्वरक :

अधिक कटाईयां लेने के लिए बिजाई के समय 40 कि.ग्रा. नाईट्रोजन व 40 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति हैक्टेयर खेत में डालनी चाहिए। उसके बाद पहली व दूसरी कटाई के बाद 30 कि.ग्रा. नाईट्रोजन प्रति हैक्टेयर देनी चाहिए।

पौध सरंक्षण :

आक्रमण/लक्षण	रोकथाम
चूर्णलासिता रोग :	1. बीज का प्रोपीकोनाजोल 25 ई. सी. (टिल्ट 0.01%) से उपचार करें। 2. फसल में टिल्ट 0.01% से दो छिड़काव करें।

सिंचाई :

इस फसल के लिए 3–4 सिंचाईयां पर्याप्त हैं। यदि अधिक कटाईयां लेनी हों तो प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई करनी चाहिए और उसके बाद 40 दिन के अंतर पर कटाई लेनी चाहिए।

बीज की फसल :

एक चारे की कटाई लेने के बाद लगभग 15 क्विंटल बीज प्रति हैक्टेयर प्राप्त किया जा सकता है।

समशीतोष्ण क्षेत्र की चारे वाली फसलें

रैड क्लोवर

यह एक बारह मासी लंबी फसल है जो ऊंचे व ठंडे क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। इससे 400–600 क्विंटल प्रति हैक्टेयर हरा चारा प्राप्त हो सकता है।

अनुमोदित किस्में :

पी.आर–सी. 3

यह किस्म ठंडी व नम जगह की घासनियों, बगीचों व चरागाहों आदि में लगाई जा सकती है। इस किस्म की ऊंचाई 75–100 से. मी. होती है तथा जमीन पर बिछी होती है। इसका तना गोल होता है। फूल गुलाबी व बीज पीला हरा रंग लिये होते हैं यह मध्य ऊंचाई में अच्छा बीज उत्पादन करता है। यह पौष्टिक चारा है। इसमें 18–20 प्रतिशत प्रोटीन होती है। इसमें 15 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर प्राप्त होता है। यह किस्म सूखे को सहन कर लेती है। इस किस्म की जड़े मजबूत और बिमारी रहित होती हैं। इससे 250–300 क्विंटल प्रति हैक्टेयर चारा मिलता है।

बिजाई का समय :

अक्तूबर–नवम्बर

बीज की मात्रा :

9–12 कि.ग्रा. / है.

खाद व उर्वरक :

नाईट्रोजन 20 कि.ग्रा. / है.

फास्फोरस 60 कि.ग्रा. / है.

अन्य सिफारिशें :

यदि संभव हो तो गर्मियों में 2–4 बार सिंचाई करें। पहली कटाई बिजाई के तीन महीने बाद ली जा सकती है और उसके बाद हर वर्ष एक कटाई बसंत ऋतु में ली जा सकती है और उसके बाद 6 सप्ताह के अंतर पर और कटाईयां ली जा सकती हैं।

व्हाईट क्लोवर

यह ठंडे क्षेत्रों की चरागाहों में चरने के लिए अति उत्तम फलीदार चारे वाली फसल है। यह भूमि में सबसे अधिक नाईट्रोजन बढ़ाने वाली फसल भी है। इससे लगभग 400 क्विंटल प्रति हैक्टेयर हरा चारा प्राप्त होता है।

अनुमोदित किस्में :

पालमपुर कम्पोजिट

यह समशीतोष्ण क्षेत्र की चरागाहों में जल्दी–जल्दी बढ़ने वाली किस्म है। इसक पत्ते

चौड़े, पंखुड़ी लम्बी, जल्दी बढ़ने वाली, बार बार प्रजनन सामर्थ्य तथा अधिक प्रोटीन–युक्त (लगभग 23% प्रोटीन शुष्क पदार्थ के आधार पर) है। इसे अकेले या अन्य घासों के साथ मिश्रित रूप में उगाया जा सकता है क्योंकि मिश्रण में इसकी बढौतरी अच्छी होती है। यदि हरे चारे या सूखे घास के लिए इसको काटा जाये तो 3–4 कटाईयां प्राप्त की जा सकती है। परंतु आमतौर पर इसे चरने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। यदि फल के बगीचों में इसे उगाया जाये तो यह भूमि की नमी को बनाए रखती है और गिरने वाले फलों को एक नर्म तह तथा साथ में पशुओं को पौष्टिक चारा भी प्रदान करती है। इसमें भूमि में अधिक नाइट्रोजन (200–400 कि.ग्रा./है) बढ़ाने की क्षमता भी है। इससे लगभग 700–800 क्विंटल प्रति हैक्टेयर हरा चारा प्राप्त होता है।

बिजाई का समय :

अक्तूबर–नवम्बर

बीज की मात्रा :

4–6 किग्रा./है.

खाद व उर्वरक :

नाईट्रोजन 20 किग्रा./है.

फास्फोरस 60 किग्रा./है.

अन्य सिफारिशें :

यदि संभव हो तो गर्मियों में 2–4 बार सिंचाई करें। पहली कटाई बिजाई के तीन महीने बाद ली जा सकती है और उसके बाद 3–4 कटाईयां मिलती हैं।

फैस्कयू

यह एक बारह मासी घास है जो 1500 मीटर से अधिक ऊंचाई वाले क्षेत्रों में चरने व सूखा घास बनाने के लिए उपयुक्त है। एक वर्ष में 4–6 कटाईयों में 300–500 क्विंटल प्रति हैक्टेयर हरा घास प्राप्त होता है।

अनुमोदित किस्मे :

हिमा–4

यह किस्म जल्दी तैयार होने वाली ऊचे क्षेत्रों में ठण्ड व सूखे को सहन करने वाली है। यह क्षारीय व अम्लीय मिट्टी को भी सहन कर लेती है। इस किस्म में मार्च–अप्रैल में हर वर्ष बीज तैयार होता है। इसकी पत्तियां मोटी, गहरी हरी व ज्यादा मात्रा में होती हैं। तना मोटा गोल होता है तथा बीज लम्बा, नुकीला व मोटा होता है। इसके पौधों की लम्बाई 1–2 मीटर होती है। यह घास बहुत पौष्टिक व स्वादिष्ट होता है। शुष्क प्रदार्थ के आधार पर 12–14 प्रतिशत प्रोटीन होती है। इससे लगभग 300–400 क्विंटल/हैक्टेयर उत्पादन होता है।

बिजाई का समय :

अक्तूबर–नवम्बर

बरसात के मौसम में इसकी जड़ों ,को 40 सैं.मी दूरी की पंक्तियों में लगाया जा सकता है।

बीज की मात्रा :

12–16 कि. ग्रा. / है. या 1,00,000 जड़ें प्रति हैक्टेयर।

खाद व उर्वरक :

बिजाई के समय 40 किग्रा. नाइट्रोजन व 40 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति हैक्टेयर डालें और उसके बाद 20 कि. ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर हर कटाई के बाद डालें।

अन्य सिफारिशें :

सामान्यतः इसकी सिंचाई नहीं की जाती है। यदि सुविधा हो तो गर्मियों में 1–2 सिंचाईयां करें।

आरचर्ड ग्रास

यह एक नर्म, स्वादिष्ट, गहरी जड़ों वाली समशीतोष्ण व शुष्क समशीतोष्ण क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। यह 3–4 कटाईयों में लगभग 500 क्विंटल प्रति हैक्टेयर हरा चारा देती है। यह चरने के लिए बहुत उपयोगी है।

अनुमोदित किस्म :

कोमैट

बिजाई का समय :

अक्तूबर–नवम्बर

जब जड़ों द्वारा लगाया जाए तो सबसे उत्तम समय मौनसून का आरंभ होता है।

बीज की मात्रा :

9–11 कि.ग्रा. / है. या 1,00,000 जड़ें प्रति हैक्टेयर।

खाद व उर्वरक :

बिजाई के समय 40 कि.ग्रा. नाईट्रोजन व 40 किग्रा. फास्फोरस प्रति हैक्टेयर और उसके बाद 20 कि.ग्रा. नाईट्रोजन प्रति हैक्टेयर हर कटाई के बाद दें।

अन्य सिफारिशें

यदि संभव हो तो 2–3 सिंचाईयां करें।

राई घास

राई घास रबी मौसम में वार्षिक चारे की फसल है जिसे किसान मक्खन घास के नाम से भी जानते हैं। इस चारे की फसल को हिमाचल प्रदेश के मध्यम तथा निचले पर्वतीय क्षेत्रों की सिंचित परिस्थितियों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। इस का चारा पशुओं के लिए स्वादिष्ट, नर्म, रसदार व प्रोटीन से भरपूर होता है।

अनुमोदित किस्में

हिम पालम राई घास–1

यह किस्म सिंचित क्षेत्रों के लिए उपयक्त है। बारीक तना युक्त पौधों के पत्ते गहरे हरे रंग, नर्म, रसीले, लंबे व पतले होते हैं। यह किस्म तीन से चार कटाइयों में 350–400 क्विंटल प्रति हेक्टेयर हरे चारे की उपज देती है। यह किस्म चूर्ण लासिता रोग प्रतिरोधी है तथा ठंड व कोहरे को सहने की क्षमता रखती है। इस का घास पशुओं के लिए बहुत ही पौष्टिक एवं पाचन वर्धक है जिसमें शुष्क पदार्थ आधार पर 12–13 प्रतिशत प्रोटीन होती है।

भूमि की तैयारी

यह फसल हल्की से भारी किसी भी प्रकार की भूमि में अच्छी तरह से तैयार की जा सकती है। अच्छी तरह से तैयार खेत जिसमें उचित मात्र में नमीं हो, बीजाई के लिए उत्तम होता है। बीजाई के उपरांत बीजों को मिट्टी से हल्का सा ढंकना चाहिए। बीज को अधिक गहरा बोने से अंकुरण बहुत कम हो जाता है।

बीजाई का समयः

मध्य सितंबर से नवंबर माह तक इस की बीजाई का उत्तम समय है।

बीज की मात्र व दूरीः

12 से 15 किलो ग्राम बीज प्रति हेक्टेयर बीज 30 से०मी० दूरी की कतारों में बीजना चाहिए।

खाद व उर्वरकः

तीन से चार कटाईयां लेने के लिए इस फसल में 100 कि०ग्रा० नाइट्रोजन, 60 कि०ग्रा० फास्फोरस व 40 कि०ग्रा० पोटाश की आवश्यकता होती है। बीजाई के समय 40 कि०ग्रा० नाइट्रोजन तथा सारी फास्फोरस व पोटाश खेत में डाल देना चाहिए। शेष नाइट्रोजन को तीन बराबर भागों में पहली, दूसरी व तीसरी कटाई के बाद 20 कि०ग्रा० प्रति हेक्टेयर की दर से डालना चाहिए।

सिचाईः

अच्छे अंकुरण के लिए बीजाई पूर्व सिंचाई अति महत्वपूर्ण होती है। पहली सिंचाई बीजाई के 20–25 दिनों उपरांत करें तथा फिर हर कटाई के बाद सिचाई करें।

कटाईः

जब घास 50–60 से०मी० ऊंची हो जाए तब इस की कटाई कर लेनी चाहिए। तीन से चार कटाइयों में 350–400 क्विंटल प्रति हेक्टेयर हरा चारा मिल जाता है। अगर बीज की फसल लेनी हो तो 7–8 क्विंटल प्रति हेक्टेयर बीज प्राप्त होता है।

हरे चारे के लिए उत्पादन योजना एवं फसलें

गायों (10) के लिए हरे चारे के उत्पादन की योजना

1. हरा चारा 35 किग्रा. / पशु / प्रति दिन चाहिए। इस प्रकार 10 पशुओं के लिए 130 टन हरा चारा प्रति वर्ष चाहिए।
2. उपरोक्त चारा प्राप्त करने के लिए 1:1 हैक्टेयर सिंचित भूमि की आवश्यकता होती है।
3. निचले तथा मध्यवर्ती पर्वतीय क्षेत्रों में निम्नलिखित फसल–चक्र अपनाएंः–

फसल चक्र– 1 (0.35 हैक्टेयर)

चरी या चरी सुडान ग्रास हाईब्रिड (एस.एच.जी.एच.)+रौंगी–बरसीम+चाईनीज सरसों

फसल चक्र–2 (0.20 हैक्टेयर)

मक्की+सोयाबीन+रौंगी–जई+चाइनीज सरसों

फसल चक्र–3 (0.20 हैक्टेयर)

चरी+रौंगी–बरसीम+जई

फसल चक्र–4 (0.35 हैक्टेयर)

चरी या चरी सुडान ग्रास हाईब्रिड (एस.एच.जी.एच)+रौंगी–बरसीम / रिजका+चाइनीज सरसों

बिजाई का समयः

चारे की उपलब्धता का विस्तार पूर्वक विवरण आगे तालिका में दियागया है।

साईलेज बनाना :

साईलेज चारे के संरक्षण का वह तरीका है जब किसी चारे को काटकर हवा की अनुपस्थिति में किण्वन किया जाता है। इस क्रिया से चारे में अम्ल पैदा होते हैं जो चारे के तत्त्वों की परिरक्षा करते हैं।

साईलेज बनाने के लिए उपयुक्त फसलें

उतने ही प्रकार के साईलेज बनाए जा सकते हैं जितने प्रकार की फसलें व उनके मिश्रण होते हैं। साईलेज बनाने के लिए मककी, ज्वार, बाजरा तथा घासों और फलीदार चारों का मिश्रण उपयुक्त हैं। अच्छी तरह बनाया गया साइलेज न केवल स्वादिष्ट व अधिक पौष्टिक होता है बल्कि इसमें सुगन्ध होने के कारण पशु इसे चाव के साथ खाते हैं। इस प्रकार बने हुए साइलेज में कैरोटीन की मात्रा भी अधिक होती है। सूखे चारे की अपेक्षा इस विधि से पोषक तत्वों की भी बहुत कम हानि होती है।

साइलेज बनाने के सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए हरे चारे की गडढ़ों में भराई इस प्रकार से की जाती है कि इसमें हवा की बहुत ही कम मात्रा रह जाये। साइलेज बनाने के लिए फसल में फूल पड़ने से दाने बनने की दूधिया अवस्था के मध्य फसल को काटना चाहिए। अच्छा साइलेज प्राप्त करने के लिए

निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिए :–

1. प्रयोग में लाए जाने वाले चारे को 55–75% नमी पर भण्डारण करना चाहिए।
2. गडढ़ों में भराई करते समय उनमें से हवा निकाल देनी चाहिए ।
3. तापमान को 30–38 डिग्री सैल्सियस तक बढ़ने देना चाहिए ।

जब हरा चारा उपलब्ध नहीं होता है तब एक किसान जिसके पास 10 दुधारू पशु हैं, उसे 60 दिनों में 120–130 क्विंटल चारे की आवश्यकता होती है। इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए 4.50 X 4.80 X 4.80 मीटर आकार का सही विभाजित गढ़ा ठीक रहता है। यह स्थान वहां होना चाहिए जहां पानी न रिसता हो और उसके किनारे ढलानदार होने चाहिए। चारे को 2–2.5 सैं. मी. के टुकड़ों में काट लेना चाहिए व फर्श और किनारों पर सूखे घास की 6 इंच मोटी तह बिछानी चाहिए। अच्छा साईलेज प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित सिफारिश की जाती है।

साइलेज सामग्री	परिरक्षक
केवल घासें	2.5–3.5 कि.ग्रा. सीरा/क्विंटल चारा
फलीदार चारे व घासें	3.2 कि.ग्रा. सीरा/क्विंटल चारा
केवल फलीदार चार	3.5–4.5 कि.ग्रा. सीरा/क्विंटल चारा

केवल घास से तैयार किए जाने वाले साइलेज को और अच्छा बनाने के लिए 0.02% यूरिया को सीरे के साथ मिलाना चाहिए जिससे अमोनिया के विषैलेपन के कारण कोई भी हानि नहीं होती है। कटे हुए चारे की तहें यूरिया व सीरे के मिश्रण के साथ जमाएं और यह काम हाथ से या किसी मशीन से करना चाहिए।

भंडारण जमीन की सतह से 60–90 सैं.मी. ऊपर होना चाहिए और ऊपर के भाग को 8–10 सैं. मी. की सूखी घास की परत से ढक देना चाहिए। फिर इसे 30–60 सैं. मी. मिटटी की परत से लेप दें। यदि बाद में इसमें कोई दरार पड़ जाये तो उसे तुरंत लेप कर बंद कर दें। यह साइलेज 6–8 सप्ताह के बाद पशुओं को खिलाने के योग्य हो जाता है।

अच्छे साइलेज के गुण :

अच्छा साइलेज बढ़िया सुगंध और स्वाद से परिपूर्ण होता है। यह फफूंद रहित और गला–सड़ा नही होना चाहिए। इसमें रंग व नमी के मात्रा एक समान होनी चाहिए। गहरे भूरे या काले रंग का साइलेज खराब व सड़ा हुआ होता है। हरा रसदार साइलेज स्वादिष्ट व पौष्टिक होता है।

बिजाई व चारे की उपलब्धता के विवरण की तालिका

फसल चक्र	क्षेत्र (है.)	बिजाई का समय	चारा की उपलब्धि	आवश्यकता (टन)	उपलब्धता (टन)	अधिक /कमी
बरसीम + चाईनीज सरसों	0.35	मध्य सितंबर	दिसंबर–मई	दिसंबर 10.85	11.50	+0.65
जई+ चाईनीज सरसों	0.2	अन्त सितंबर	दिसंबर–मार्च	जनवरी 10.85	11.00	+0.15
बरसीम+ जई	0.2	अन्त सितंबर	दिसंबर–मार्च	फरवरी 9.80	6.00	–3.80
बरसीम+ चाइनीज सरसों	0.35	मध्य सितंबर	दिसंबर–मार्च	मार्च 10.85	13.50	+2.65
मक्की+ सोयाबीन/ रौंगी	0.2	शुरू अप्रैल	जून	अप्रैल 10.50 मई 10.85 जून 10.50	11.50 9.00 10.75	+ 1.00 –1.85 +0.25
चरी सा चरी सूडान ग्रास हाइब्रिड	0.35	अन्त जून	जून–नवंबर	जुलाई 10.85	12.50	+1.15
मक्की+रौंगी	0.2	शुरू जून	सितंबर	अक्तूबर 10.85	11.50	+0.65
चरी+रौंगी	0.2	शुरू जून	सितंबर–नवंबर	अगस्त 10.85 सितंबर 10.50	15.50 18.50	+4.65 +8.00
चरी या चरी सूडान ग्रास हाइब्रिड	0.35	मई–जून	मई–दिसंबर	नवंबर 10.50	7.25	–3.25

नोट : मार्च, अगस्त व सितंबर में बचे हुए चारे को साइलेज या सूखी घास में बदल लेना चाहिए ताकि कमी वाले समय में खिलाया जा सके।

परिशिष्ट–1 हिमाचल प्रदेश के कृषि–जलवायु पर आधारित खण्ड

खण्ड 1. सम पर्वतीय और निचले पर्वतीय सम उष्ण कटिबन्धीय खण्ड

खण्ड 1 की ऊँचाई समुद्र तल से 240–1000 मी. है। इसका क्षेत्रफल 10,260 वर्ग किलोमीटर सपाट भौगोलिक दशा में फैला है। इसमें प्रदेश के कुल क्षेत्रफल का 18.43 प्रतिशत भाग आता है। इस खण्ड के अंतर्गत कांगड़ा, ऊना, हमीरपुर, बिलासपुर, सोलन, सिरमौर, चम्बा व मण्डी जिलों की 28 संपूर्ण तहसीलें व 34 तहसीलों को कुछ भाग आते हैं। इस मण्डल की जलवायु उप–उष्णकटिबन्धीय किस्म की है जिसका औसत वार्षिक तापमान 15 से 23 डिग्री सेंटीग्रेड तक रहता है। औसत वर्षा 1100 मि.मी. होती है जिसमें से 80 प्रतिशत बरसात जुलाई से सितंबर महीने में होती है।

मृदा एवं फसलें :

इस मण्डल की मृदा उथली, हल्की, कम उपजाऊ है। इस खण्ड का पी.एच. मान 6.5 से 7.5 के बीच है। अधिकांश क्षेत्र में बारानी खेती की जाती है। मुख्य फसलें गेंहूँ धान, मक्का, दालें व तिलहनी फसलें हैं। गन्ना और आलू कुछ सीमा तक यहां उगाए जातें हैं। आम, नींबू प्रजाति के फल और लीची महत्वपूर्ण उप–उष्णकटिबन्धीय फलों की फसलें पायी जाती है। इस क्षेत्र में तीन प्रकार की वनस्पतियां पायी जाती है।

1. उत्तरी शुष्क पतझड़ी वन।
2. शुष्क पतझड़ी झाड़ियां।
3. शिवालिक चीड़ के वन।

इस खण्ड को आगे दो भागों में विभाजित किया गया है।

खण्ड 1.1

इस खण्ड की ऊंचाई समुद्र तल से 240–1000 मी और औसत वार्षिक वर्षा 1600 मि.मी. से कम होती है। इस मण्डल के अंर्तगत 8201 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र आता है। इस क्षेत्र का वार्षिक औसत तापमान 15 से 23 डिग्री सेंटीग्रेट तक रहता है। इस क्षेत्र की मृदा स्थिर रुप से उथली, हल्की, कम ऊपजाऊ है जिसकी पी.एच 6.5 से 7.5 है। इस मण्डल के अंतर्गत 18 संपूर्ण तहसीलें तथा कुछ तहसीलों का कुछ भाग आता है। साधारणतय इस क्षेत्र में बारानी खेती की जाती है। गेहूँ, धान, मक्का, दालें व तिलहन यहां की मुख्य फसलें हैं। गन्ना और आलू कुछ सीमा तक यहां उगाए जातें हैं। आम, नींबू प्रजाति के फल और लीची आदि फलों की फसलें पायी जाती है।

खण्ड 1.2

इस खण्ड की ऊँचाई समुद्र तल से 240–1000 मी. और औसत वार्षिक वर्षा 1600 मि.मी. से अधिक होती है। इस मण्डल के अंतगत 2059 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र आता है। इस क्षेत्र का वार्षिक औसत तापमान 18.6 से 21.93 डिग्री सेंटीग्रेट तक रहता है। इस क्षेत्र की मृदा में साधारण रुप से नाइट्रोजन

और फासफोरस की कमी होती है। गेहूँ, धान, मक्का, दालें व तिलहनी यहां की मुख्य फसलें हैं। गन्ना और आलू कुछ सीमा तक यहां उगाए जातें हैं। नींबू प्रजाती के फल और लीची आदि फलों की फसलें पायी जाती हैं।

खण्ड 2 मध्यवर्ती पर्वतीय सम–आर्द्र खंड

खण्ड 2 की ऊँचाई समुद्र तल से 1001–1500 मी. पर 4664 वर्ग किलोमीटर तक फैला है। इसमें प्रदेश के कुल क्षेत्रफल का 8.37 प्रतिशत भाग आता है। इस खण्ड में कांगड़ा जिला की पालमपुर व कांगड़ा तहसीलें, शिमला जिला की रामपुर तहसील व मंडी, सोलन, कुल्लू, चम्बा, व सिरमौर जिलों के भाग आते हैं। इस मण्डल की जलवायु उप–आद्र किस्म की है जिसका औसत वार्षिक तापमान 14 से 22 डिग्री सेंटीग्रेड तक रहता है। औसत वर्षा 1500 मि.मी. होती है। धर्मशाला और पालमपुर में 3000 मि.मी. तक वर्षा होती है। इस क्षेत्र की मृदा दोमट से चिकनी मिट्टी है और इस क्षेत्र की मृदा में साधारण रुप से नाइट्रोजज और फास्फोरस की कमी होती है।

पानी व तत्त्वों को अपने में समाए रखने में कमजोर हैं। भूमि अम्लीय है जो चूने के उपयोग से अधिक उपज देती है। गेहूँ, धान, मक्की, बीज का आलू गन्ना, तिलहनी व दलहनी यहां की मुख्य फसलें हैं। गुठली तथा नींबू प्रजाती के फल–पौधे यहां काफी क्षेत्र में फैले हुए हैं। जंगल व चरागाहे भी यहां मुख्य है। इस क्षेत्र में दो प्रकार की वनस्पतियां पायी जाती हैं।

1. निम्न पश्चिमी हिमालयन सम–आर्द्र वन।
2. हिमालयन चीड़ के वन।

इस खण्ड को दो भागों में विभाजित किया गया है।

खण्ड 2.1

इस खण्ड की ऊँचाई समुद्र तल से 1001–1500 मी और औसत वार्षिक वर्षा 700–1500 मि.मी. से कम होती है। इस मण्डल के अंर्तगत 3770 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र आता है। इस क्षेत्र का वार्षिक औसत तापमान 14.2 से 22.1 डिग्री सेंटीग्रेड तक रहता है। इस खण्ड के अंतर्गत चम्बा, बिलासपुर, मण्डी, शिमला, सोलन, सिरमौर, कुल्लू और किन्नौर जिलों के कुछ भाग आते हैं। इस क्षेत्र की मृदा में साधारण रुप से नाइट्रोजन, फासफोरस और पोटाशियम की कमी होती है। पानी व तत्त्वों को अपने में समाए रखने में कमजोर हैं। भूमि अम्लीय है जो चूने के उपयोग से अधिक उपज देती है। गेहूँ, धान, मक्की, गन्ना, तिलहनी व दलहनी यहां की मुख्य फसलें हैं।

खण्ड 2.2

इस मण्डल की ऊँचाई समुद्र तल से 1001–1500 मी और औसत वार्षिक वर्षा 1500 मि.मी. से अधिक होती है। इस मण्डल के अंर्तगत 894 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र आता है। इस क्षेत्र का वार्षिक औसत तापमान 16.53 से 21.25 डिग्री सेंटीग्रेट तक रहता है। इस क्षेत्र में सिरमौर, सोलन, कांगड़ा के कुछ क्षेत्र आते हैं। इस क्षेत्र की मृदा दोमट से चिकनी मिट्‌टी है। इस क्षेत्र की मृदा अम्लीय है और साधारण रुप से

इनमे नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की कमी होती है।

खण्ड 3 उच्च पर्वतीय आर्द्र शीतोषण खंड

खण्ड 3 की ऊँचाई समुद्र तल से 1501–3250 मी. पर 9217 वर्ग किलोमीटर तक फैला है। इसमें प्रदेश के कुल क्षेत्रफल का 16.54 प्रतिशत भाग आता है। इस खण्ड में शिमला, कुल्लू, सोलन, चम्बा, मण्डी, कांगड़ा और सिरमौर जिलों के भाग आतें हैं। इस मण्डल की जलवायु उप–आर्द्र किस्म की है जिसका औसत वार्षिक तापमान 9 से 20.4 डिग्री सेंटीग्रेड तक रहता है। औसत वर्षा 1000 मि.मी. होती है। इस क्षेत्र की मृदा कम गहराई बाली, रेतीली दोमट से दोमट है। नाइट्रोजन और फॉसफोरस मे कम और इस क्षेत्र की मृदा साधारण रुप से अम्लीय होती है। छोटे–2 ढलानदार खेतों में खेती की जाती है। गेहूं, मक्की, धान, जौ, दलहनी व तिलहनी यहां की मुख्य फसलें हैं। आमतौर पर यहां बारानी खेती की जाती है। यह खण्ड बैमौसमी सब्जियों के लिए व शीतोषण सब्जियों के बीज उत्पादन के लिए उपयुक्त है। सेब, दूसरे शीतोषण फल व अखरोट यहां की मुख्य फलदार फरलें हैं।

इस मण्डल को आगे दो भागों में विभाजित किया गया है।

खण्ड 3.1

इस क्षेत्र की ऊँचाई समुद्र तल से 1501–2500 मी. और औसत वार्षिक वर्षा 1500 मि.मी. से कम होती है। इस मण्डल के अर्न्तगत 8207 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र आता है। इस क्षेत्र का वार्षिक औसत तापमान 9.1 से 20.6 डिग्री सेंटीग्रेड तक रहता है। इस क्षेत्र की मृदा दोमट प्रकार की है। इस क्षेत्र में शिमला, चम्बा, कुल्लू, सिरमौर, सोलन और किन्नौर जिले के कुछ भाग आते हैं। इस क्षेत्र की मृदा कम गहराई बाली, रेतली, दोमट से दोमट है, नाइट्रोजज और फॉसफोरस की कमी और इस क्षेत्र की मृदा साधारण रुप से अम्लीय होती है। गेहूं, मक्की, धान, जौ, दलहनी व तिलहनी यहां की मुख्य फसलें हैं। आमतौर पर यहां बारानी खेती की जाती है। यह खण्ड बैमौसमी सब्जियों के लिए व शीतोषण सब्जियों के बीज उत्पादन के लिए उपयुक्त है। सेब, दूसरे शीतोषण फल व अखरोट यहां की मुख्य फलदार फसलें हैं।

खण्ड 3.2

इस क्षेत्र की ऊंचाई समुद्र तल से 1504–3250 मी और औसत वार्षिक वर्षा 1500 मिमी. से अधिक होती है। इस मण्डल के अर्न्तगत 1010 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र आता है। इस क्षेत्र का वार्षिक औसत तापमान 15.4 से 20.5 डिग्री सेंटीग्रेट तक रहता है।

इस क्षेत्र की मृदा साधारण रुप से हल्की और रेतीली दोमट प्रकार की है। इस क्षेत्र के अंतर्गत चम्बा, कांगड़ा, मण्डी, सोलन, शिमला और सिरमौर जिलों के कुछ भाग आते हैं। इस क्षेत्र की मृदा कम गहराई बाली, रेतीली, दोमट से दोमट है, नाइट्रोजन और फॉस्फोरस में कम और इस क्षेत्र की मृदा साधारण रुप से अम्लीय होती है। गेहूं, मक्की, धान, जौ, दलहनी व तिलहनी यहां की मुख्य फसलें हैं। आमतौर पर यहां बारानी खेती की जाती है। यह खण्ड बैमौसमी सब्जियों के लिए व शीतोषण सब्जियों

के बीज उत्पादन के लिए उपयुक्त है। सेब, दूसरे शीतोषण फल व अखरोट यहां की मुख्य फलदार फसलें हैं।

खण्ड 4 ऊंचे पर्वतीय शुष्क शीतोष्ण खंड

खण्ड 4 की ऊँचाई समुद्र तल से 2501 मी. से अधिक है और यह 31509 वर्ग किलोमीटर तक फैला है। इसमें प्रदेश के कुल क्षेत्रफल का 56.61 प्रतिशत भाग आता है। इस मण्डल की जलवायु ठण्डी शुष्क किस्म की है जिसका औसत वार्षिक तापमान 9 से 20 डिग्री सेंटीग्रेड तक रहता है। औसत वर्षा 1000 मि.मी. होती है। इस क्षेत्र –में किन्नौर, चम्बा और लाहौल–स्पिति जिलों के भाग आते हैं। इस क्षेत्र की मृदा हल्की, रेतीली दोमट प्रकार की है और इस क्षेत्र की मृदा साधारण रुप से अम्लीय होती है। इस क्षेत्र की मृदा कम उपजाऊ व उदासीन से लवणीय है। जौं, गेहूं, काठू, मटर, कुठ, मोटे अनाज, शीतोष्ण सब्जियां व शुष्क फल यहां की मुख्य फसलें हैं। हॉप्स, कालाजीरा, केसर भी यहां पर उगाए जाते हैं।

इस मण्डल को तीन भागों में विभाजित किया गया है।

खण्ड 4.1

इस खण्ड की ऊँचाई समुद्र तल से 2501–3250 मी. और औसत वार्षिक वर्षा 1500 मि.मी. से कम होती है। इस मण्डल के अंर्तगत 2501 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र आता है। इस क्षेत्र का वार्षिक औसत तापमान 9 से 20 डिग्री सेंटीग्रेड तक रहता है। इस क्षेत्र के अंतर्गत चम्बा, कांगड़ा, मण्डी, किन्नौर, कुल्लू, सिरमौर, शिमला और लाहौल स्पिति की उदयपुर, लाहौल और स्पिति जिलों के कुछ भाग आते हैं। इस क्षेत्र की मृदा साधारण रुप से अम्लीय होती है। इस क्षेत्र की मृदा कम उपजाऊ व उदासीन से लवणीय है। आलू, जौ, गेहूं, काठू, मटर, कुठ, मोटे अनाज शीतोष्ण सब्जियां व शुष्क फल यहां की मुख्य फसलें हैं। सेब और केसर भी यहां पर उगाए जाते हैं।

खण्ड 4.2

इस क्षेत्र की ऊँचाई समुद्र तल से 3251–4250 मी. और इस मण्डल के अंतर्गत 7003 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र आता है। इस क्षेत्र का वार्षिक औसत तापमान 13.2 से 17.6 डिग्री सेंटीग्रेट तक रहता है। इस क्षेत्र की जलवायु शुष्क शीतोष्ण प्रकार की है। इस क्षेत्र के अंतर्गत चम्बा, कांगड़ा, मण्डी, किन्नौर, कुल्लू, सिरमौर और लाहौल स्पिति जिलों के कुछ भाग आते हैं। इस क्षेत्र की मृदा हल्की, रेतीली दोमट प्रकार की है और इस क्षेत्र की मृदा साधारण रुप से अम्लीय होती है। इस क्षेत्र की मृदा कम उपजाऊ व उदासीन से लवणीय है। आलू, जौ, गेहूं, काठू, मटर, कुठ, मोटे अनाज शीतोष्ण सब्जियां व शुष्क फल यहां की मुख्य फसलें हैं। सेब, अंगूर, बादाम, खुमानी, अखरोट, कालाजीरा, केसर भी यहां पर उगाए जाते हैं।

खण्ड 4.3

इस क्षेत्र की ऊँचाई समुद्र तल से 4250 मी. से अधिक और इस मण्डल के अंतर्गत 19890 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र आता है। इस क्षेत्र का वार्षिक औसत तापमान 8.7 से 19.7 डिग्री सेंटीग्रेड तक रहता है।

इस क्षेत्र में चम्बा, कांगड़ा, कुल्लू, किन्नौर, शिमला व लाहौल स्पिति जिलों के कुछ भाग आते हैं। इस क्षेत्र की मृदा हल्की, रेतीली दोमट प्रकार की है और इस क्षेत्र की मृदा साधारण रुप से अम्लीय होती है। इस क्षेत्र की मृदा कम उपजाऊ व उदासीन से लवणीय है। गेहूं, काठू, कुठ, मोटे अनाज शीतोष्ण सब्जियां व शुष्क फल यहां की मुख्य फसलें हैं। हॉप्स, कालाजीरा, भी यहां पर उगाए जाते हैं।

परिशिष्ट–2 राइजोबियम से टीका करना

राइजोबियम से टीका करना

फलीदार फसलों में विचित्र प्रकार की क्षमता होती है जिससे वे वातावरण में विद्यमान नाइट्रोजन को जड़ों की गांठों में रहने वाले नाईट्रोजन खींचने वाले बैक्टीरिया के द्वारा भूमि में डाल सकते हैं। राइजोबियम की स्थानीय किसमें इसके लिए ज्यादा उपयोगी नहीं हैं। अतः यह अनुमोदन किया जाता है कि बीजों को राइजोबियम की उपयुक्त किस्म से उपचारित किया जाये। यह विधि काफी सस्ती है और इससे पौधों में वातावरण से नाइट्रोजन खीचने की क्षमता बढ़ती है। इस टीकाकरण से दालों की अच्छी फसल ली जा सकती है।

राइजोबियम टीकाकरण की विधिः

60 ग्राम गुड़ को आधा लीटर पानी में घोला जाता है। इसमें राइजोबियम के टीके का पैकेट (250 ग्राम) डाला जाता है। उसके बाद इस घोल को 10 किग्रा. बीज के साथ साफ हाथों से मिलाया जाता है और यह निश्चित किया जाता है कि इस घोल से सभी बीज उपचारित हो गए हों। इन उपचारित बीजों को साफ चादर या पौलीथीन पर डालकर छाया में सुखाया जाता है ताकि वह सूख जायें। फिर इन बीजों की बिजाई की जाती है और मिट्टी से ढककर सुहागा फेरा जाता है ताकि सूरज की सीधी किरणें इन बीजों पर न पड़ें।

परिशिष्ट–3 नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश उर्वरकों के स्त्रोत

उर्वरक	ना. (%)	फा. (%)	पो. (%)
कैल्शियम अमोनियम नाईट्रेट (किसान खाद)	25	–	–
अमोनियम सल्फेट	20	–	–
डाइअमोनियम फास्फेट (डी ए पी)	18	46	–
यूरिया	46	–	–
सुपरफास्फेट	–	16	–
यूरिया अमोनियम फास्फेट	28	28	–
सल्फेट ऑफ पोटाश	–	–	48
म्यूरेट ऑफ पोटाश	–	–	60
एक किलोग्राम तत्व के लिए उर्वरकों की मात्रा			
एक किलोग्राम नाईट्रोजन के लिए	–		
अमोनियम सल्फेट	5.00 कि.ग्रा.		
यूरिया	2.17 कि.ग्रा.		
एक किलोग्राम फास्फोरस के लिए			
सुपरफास्फेट	6.25 कि.ग्रा.		
डाइ अमोनियम फास्फेट	2.17 कि.ग्रा.		
यूरिया अमोनियम फास्फेट	3.57 कि.ग्रा.		
एक किलोग्राम पोटाश के लिए			
म्यूरेट ऑफ पोटाश	1.66 कि.ग्रा.		
सल्फेट ऑफ पोटाश	2.08 कि.ग्रा.		

8.3 कि.ग्रा. इफको 12:32:16 उर्वरक से एक किलोग्राम नाईट्रोजन, 2.6 किलोग्राम फॉस्फोरस व 1.3 किलोग्राम पोटाश मिलेगी।

परिशिष्ट–4 खरपतवार, कीट एवं फंफूद नाशियों के प्रयोग में मात्रा का निर्धारण

मात्रा का निर्धारण:

$$\text{जितनी कमर्शियल दवाई चाहिए (कि.ग्रा./हैक्टेयर)} = \text{दवाई की मात्रा (स.प.कि.ग्रा./है.)} \times \frac{100}{\text{सक्रिय पदार्थ (\%)}}$$

उदाहरण :

एट्राजीन की मात्रा (स.प.) प्रति हैक्टेयर = 1250 ग्राम

कमर्शियल दवाई में सक्रिय प्रदार्थ = 50 डब्लयू पी

अतः कमर्शियल दवाई एट्राजीन की मात्रा प्रति हैक्टेयर = $\frac{1250 X 100}{50}$ =2500 ग्राम

प्री–ऐमरजैन्स (पौध निकलने के पहले):

खरपतवारनाशक दवाई का फसल और खरपतवार निकलने के पहले बिजाई के 48 घंटे के अंदर प्रयोग करना।

पौस्ट–ऐमरजैन्स (पौध निकलने के बाद):

खरतपतवारनाशक दवाई का फसल और खरपतवार निकलने के बाद, जब खरतपतवार में 2–3 पत्ते हों, प्रयोग करना।

डाइरैक्टेड स्प्रे (सीधा छिड़काव):

खरतपतवारनाशक दवाई का छिड़काव करते समय नोजल द्वारा केवल खरपतवार पर ही सीधा छिड़काव करना।

सावधानियां :

1. खरपतवारनाशक दवाई संबंधी सभी निर्देशों को पढ़ें व अपनायें ।
2. छिड़काव यंत्र (स्प्रे पम्प) का छिड़काव से पहले जांच करें।
3. केवल फ्रलैट फैन (फब्बारे वाली) नॉजल या ईवान स्प्रे नॉजल का प्रयोग करें।
4. छिड़काव करने से पहले और बाद में साफ पानी से पम्प को साफ करें।
5. जितने क्षेत्र मे छिडकाव करना हो उसके अनुसार ही खरपतवारनाशक दवाई की मात्रा प्रयोग में लाएं।
6. खरपतवारनाशक दवाई को पहले थोड़े पानी (1–2 लीटर) में घोलें और उसके बाद ही निर्धारित पानी में मिलाएं (600–750 लीटर/हैक्टेयर)।

7. छिड़काव करने वाले क्षेत्र को विभिन्न भागों में बांट लें जैसे–एक बीघा क्षेत्र को 200 वर्ग मीटर के चार भागों में बांट लें और एक भाग में 12–15 लीटर दवाई के घोल का प्रयोग करें । ऐसा करने से सारे क्षेत्र में एक समय छिड़काव हो सकेगा।
8. बारिश व तेज हवा चलने वाले दिनों में छिड़काव न करें।
9. फसल व खरपतवार के निकलने के बाद की अवस्था की जांच करके ही छिड़काव करें।
10. खरपतवारनाशक दवाईयों को लेबल वाले डिब्बों या बोतलों में व इन्हें बच्चों व खाने पीने की चीजों से दूर रखें।

परिशिष्ट–5 उपज निर्धारण सबंधी धारणा

(1) गेहूं :

भारत सहित प्रगतिशील देशों में अन्न उत्पादन में रासायनिक खादों का उपयोग एक विवशता बन रही है। अतः यह आवश्यक हो गया है कि उपज निर्धारण के आधार पर इन खादों की सबसे किफायती मात्रा का पता लगाया जाए ताकि भूमि व रासायनिक खादों से मिलने वाले तत्वों द्वारा किसी फसल में निर्धारित उपज प्राप्त की जा सके। ऐसी ही एक जानकारी हिमाचल प्रदेश की तेजाबी भूमियों में पैदा होने वाली गेहूं की फसल के लिए तैयार की गई है जो निम्नलिखित हैः–

(क)		एन	पी$_2$ ओ$_5$	के$_2$ ओ
(1)	प्रति क्विंटल गेहूं के दाने प्राप्त करने के लिए तत्वों की आवश्यकता (कि.ग्रा.)	2.35	0.63	1.66
(2)	भूमि से प्राप्त होने वाले तत्वों का योगदान (%)	6.0	41.6	12.8
(3)	खादों से प्राप्त होने वाले तत्वों का योगदान (%)	47.8	8.0	68.3

(ख) मूलभूत आधार पर खादों की मात्रा :

$$\text{खाद की मात्रा (कि.ग्रा./है)} \quad \frac{\text{प्रति क्विंटल गेहूं के दाने प्राप्त करने के लिए तत्व (कि.ग्रा.)}}{\text{खादों से प्राप्त तत्व (\%)}} \times \frac{\text{भूमि से प्राप्त तत्व (\%)}}{\text{खादों से प्राप्त तत्व (\%)} \times \text{एस. टी.वी (कि.ग्रा./है.)}}$$

या

खाद की मात्रा (कि.ग्रा./है.)	=	कान्सटैन्ट X टी–कान्सटैन्ट X एस टी वी (कि.ग्रा./है.)
जहां, टी.	=	उपज निर्धारण (कि.ग्रा./है.)
एस. टी. वी.	=	मिट्टी परीक्षण मान (कि.ग्रा./है.)

मिट्टी परीक्षण

पी. एच.	ओ. सी.	बनावट	मिलने वाले तत्व (कि.ग्रा./है.)		
			ना.	फा.	पो.
5.7	0.67	दोमट	600	90	95

(ग) प्राप्त हुए आंकड़े (ख) को खाद के समीकरण में बदलने के लिए ताकि निर्धारित उपज प्राप्त की जा सके–

एफ. एन. = 491 टी.–0.124 एस एन

एफ. पी$_2$ ओ$_5$ = 7.86 टी.–5.16 एस पी

एफ. के$_2$ ओ. = 2.44 टी.–0.187 एस के

(2) मसर

एफ. एन. = 10.53 टी.–0.40 एस एन

एफ. पी$_2$ ओ$_5$ = 8.77 टी.–8.62 एस पी

एफ. के$_2$ ओ. = 3.26 टी.–0.13 एस के

(3) चना

एफ. एन. = 13.35 टी.–0.46 एस एन

एफ. पी$_2$ ओ$_5$ = 4.56 टी.–7.62 एस पी

एफ. के$_2$ ओ. = 2.12 टी.–0.09 एस के

जहां

एफ. एन., एफ. पी$_2$ ओ$_5$ और एफ. के$_2$ ओ. – नाईट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश खादों को दर्शाते हैं,

टी.–निर्धारित उपज (क्विंटल / हैक्टेयर)

एस.,एन.,एस. पी. और एस. के.–मिट्टी से प्राप्त नाईट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश को दर्शाते हैं।

परिशिष्ट–6 फुलणू की रोकथाम

1. फूलणू की रोकथाम प्राथमिकता के आधार पर आवश्यक है ताकि चरागाहों व घासनियों, जंगलों व अन्य स्थानों को व पशुओं के स्वास्थ्य को इसके दुष्प्रभाव से बचाया जा सके।

2. इस खरपतवार की रोकथाम के लिए आवश्यक –है कि उन्मूलन के लिए सामुदायिक रूप से योजना बनाई जाये ताकि एक समय में ही सारे क्षेत्र से इसका निदान किया जा सके और इसके फैलने के सूत्र को भी नष्ट किया जा सके ।

3. इसकी रोकथाम के लिए निम्नलिखित दो उपायों का अनुमोदन किया गया हैः

(i) इसकी झाड़ियों को काट दें और उसके बाद जमीन से पूरी जड़ों को निकाल दें।

यह काम जनवरी–फरवरी में करना चाहिए ताकि बारिशों के बाद जड़ों को आसानी से निकाला जा सके। जड़ों के समूह को निकालते समय यह ध्यान रहे कि सारी जड़ें जमीन से निकाल ली जाए। दूसरे साल भी यही विधि अपनाएं क्योंकि 25–30% झाड़ियां फिर निकल आती हैं। इस दौरान सारी निकली हुई झाड़ियों को बार–बार काटते रहें ताकि जड़ों में इक्ट्ठी खुराक को समाप्त किया जा सके। तीसरे साल भी कुछ ही झाड़ियां (10% से अधिक नहीं) यहां वहां निकलेंगी जिन्हें आसानी से निकाला जा सकता है। रोकथाम की इस प्रक्रिया में जैसे ही झाड़ियों को जड़ से निकालने का काम समाप्त हो जाये तो उस क्षेत्र में घास, चारे वाले वृक्ष या कोई अन्य उपयोगी पौधे लगा दें जो वहां के लिए उपयुक्त हों। इनमें सिटेरिया, हाथी घास, गिन्नी घास बहुत उपयुक्त हैं और उन्हें लगाना चाहिए। चारे वाले वृक्ष को चुनकर क्षेत्र की उपयोगिता के अनुसार लगांए।

(ii) दूसरी विधि से फुलणू के रोकथाम के लिए नीचे दिए गए पग उठाएंः

(क) झाड़ियों को जमीन की सतह से 2–3 इंच तक काट लें। यह काम सितम्बर के महीने में करने से अच्छे परिणाम मिलते हैं वैसे इन्हें पहले भी काट सकते हैं।

(ख) इन झाड़ियों के काटने के डेढ़–दो महीने बाद कटे हुए भाग से फिर शाखाएं निकलेंगी और उस समय काफी नर्म पत्ते होते हैं तो उस समय ग्लाईफोसेट 1.0 प्रतिशत (ग्लाईसेल 41 एस एल) का छिड़काव करें। छिड़काव करते समय यह ध्यान रखें कि पत्ते पूरी तरह से भीग जाएं। अच्छे परिणाम लेने के लिए अक्तूबर–नवम्बर में छिड़काव करना चाहिए। यह खरपतवारनाशी जड़ों में पहुंचकर उन्हें मार देता है। यदि उपरोक्त दोनों विधियां ठीक से की हों तो फुलणू के फिर निकलने का कोई अवसर नहीं होगा क्योंकि जड़ों और शाखाओं को पूरी तरह पहले ही नष्ट किया जा चुका है।

(ग) झाड़ियों के मरने के बाद उस क्षेत्र में घास,चारे वाले वृक्ष लगा देने चाहिए ताकि फुलणू या अन्य खरपतवार द्वारा फिर प्रकोप न हो जाये।

(घ) यदि फिर भी कोई झाड़ी निकल आये त्तो उसी पर ग्लाईफोसेट का छिड़काव करें या जड़ से निकाल कर नष्ट कर दें।

4. काटी हुई झाड़ियों को जलाने में प्रयोग किया जाना चाहिए। नर्म पत्तों व शाखाओं को गोबर के साथ देसी खाद बनाने में प्रयोग में लाना चाहिए या फिर उन्हें खेत में बिछा दें ताकि इससे नमी का संरक्षण रहे और बाद में मिट्टी में ही मिला दें।

परिशिष्ट–7 भण्डारित अनाज के कीट

भण्डारित अनाज के कीट	**नियन्त्रण / अभियुक्ति**
कीट	**रोकथाम**
1) गोदाम में रखे गए अनाज में लगने वाले कीट :	
गेहूं, जौं तथा अनाज की अन्य फसलें : गोदाम में रखे गए दानों को कीड़े लगते हैं जिसके कारण पौष्टिक शक्ति तथा उगने की क्षमता कम हो जाती है। इनमें घुन, सुसरी, ढोरा व अनाज के पतंगे प्रमुख है।	1. नई फसल को साफ सुथरे गोदाम में रखें। 2. गोदाम की दरारों तथा टूटे फर्श व उसमें पड़े सुराखों को सीमेंट से बंद कर लें। 3. दानों को नई बोरियों में रखें । यदि पुरानी बोरियां प्रयोग करनी हों तो उन्हें मैलाथियान 50 ई. सी. (1 भाग साईथियान / मैलाथियान 500 भाग पानी) में 10 मिनट भिगोकर छाया में सुखाएं और उसके बाद दानों से भरें । 4. खाली गोदामों को अप्रैल–मई में मैलाथियान 50 ई.सी. (1 भाग साईथियान / मैलाथियान 100 भाग पानी) के घोल से फर्श, दीवारों व छतों पर छिड़काव करें या एल्यूमिनियम फासफाईड (सैलफास / फासटाक्सिन) की 100 गोलियां प्रति 100 घन मीटर (3600 घन फुट) में प्रयोग करें । 5. बीज के लिए रखे गए दानों में 250 ग्राम (साइथयिान / मैलाथियान) 5% धूल प्रति क्विंटल के हिसाब से मिलाए। **सावधानी :** 1. जहां पर खपरा का प्रकोप हो वहां पर गोदाम में सैलफास / फासटाक्सिन को दुगुनी मात्रा में प्रयोग करें। 2. खाने वाले अनाज में कीटनाशक न मिलाएं। 3. विषैली गैस देने वाली दवाईयों का प्रयोग केवल बंद गोदामों में करें। घरों में इनका प्रयोग न करें।
दालें (चने व मूंग का ढोरा)	एल्यूमिनियम फासफाईड (फासटाक्सिन / सैलफास) 15 प्रतिशत् (12 ग्राम) की एक गोली / टन या 50 गोलियां प्रति 100 घन मीटर के लिए प्रयोग करें। गोदाम को कम से कम 7 दिन तक बंद रखें।

परिशिष्ट–8 अन्य हानिकारक जीव जन्तु

अन्य हानिकारक जीव जन्तु	
खेत तथा घर में रहने वाले चूहे: यह बहुत अधिक नुक्सान पहुंचाते हैं. तथा गोदाम में रखे दानों को खाकर और उनमें पेशाब, बाल तथा अन्य गन्दगी मिलाकर खराब कर देते हैं। यह बोरियों, कपड़ों को भी नुक्सान पहुंचाते हैं ।	1. चूहों को चूहेदानी में पकड़ कर व पानी में डूबोकर मार दें। 2. शाम के समय चूहे के बिलों की खोज कर लें तथा उन्हें बन्द कर दें और अगले दिन खुले हुए बिलों में अलूमिनियम फासफाईड (फासटाक्सिन/सैलफास) की एक गोली डाल कर बंद कर दें। 3. 49.5 किग्रा. गेहूं, मक्की, बाजरा या चने के दानों में 500 ग्रा. जिंक फासफाईड और सरसों का तेल मिलाएं और उसके बाद एक चम्मच भर बिल के अंदर व बाहर रखें।
पक्षी: कुछ पक्षी जैसे चिड़िया, कौवे, तोते इत्यादि कई फंसलों, सब्जियों और फलों को हानि पहुंचाते हैं।	1. पक्षियों को भयभीत करने वाले यंत्र से भगा दें। 2. चिड़ियों को 2% लिबासिड 100 ई.सी. फैनथियान) से रचे हुए गेहूं के दानों को खिलाने से मारा जा सकता है। 3. कौवों को 2% लिबासिड 100 ई.सी. (फैनथियान) से रचित चपातियां खिलाने से मारा जा सकता है। 4. प्रजनन के समय पक्षियों के अंडों व घोंसलों को नष्ट कर दें। **सावधानी:** एक किलोग्राम गेंहूं के दानों को आधा लीटर पानी जिसमें 2–3 मि.ली. लिबासिड 100 ई.सी. मिला हो, 6 घंटों के लिए भिगोएं व उसके बाद छाया में सूखाएं। इन दानों को सांयकाल कपड़े पर डालकर बिखेर दें ताकि चिड़िया अगले दिन प्रातः उन्हें खा लें। बच्चों, पालतु जानवरों व पशुओं को इनके निकट न जानें दें।

परिशिष्ट–9 उपयोग के लिये वर्जित कीटनाशक/खरपतवारनाशी रसायनों की सूची

क्र. स.. कीटनाशक रसायन (उत्पादन उपयोग व आयात के लिए वर्जित)

(क)
1 एलड्रिन
2 बेनझीन हेक्साक्लोराईड
3 केल्शियम साईनाईड
4 क्लोरडेन
5 कापर एसीटोआरसीनाईट
6 सीब्रोमोक्लोरोप्रोपेन
7 एन्ड्रिन
8 इथाईल मरकरी क्लोराईड
9 इथाईल पेराथियान
10 हेप्टाक्लोर
11 मीनाजोन
12 नाईट्रोफेन
13 पेराक्वेट डाईमिथाईल सल्फेट
14 पेन्टाक्लोरो नाईट्रोबेन्जीन
15 पेन्टाक्लोरोफीनाल
16 फीनाईल मरकरी एसीटेट
17 सोडियम मीथेन आरसीनेट
18 टेट्राडाईफान
19 टोक्साफेन
20 एल्डीकारब
21 क्लोरोबेन्जीलेट
22 डाईएलड्रीन
23 मेलिक हाईड्रेजाईड
24 इथाईलीन डाईब्रोमाईड
25 टाईक्लोरो एसीटिक एसिड (फारमूलेशन)
26 मैटोओक्षुरॉन
27 क्लोरोफैनविनफॉस
28 लिनडेन (मार्च 2013 से प्रतिबंधित)
29 एण्डोसल्फान

(ख) सिर्फ उत्पादन व निर्यात के लिये मान्य कीटनाशी रसायन प्रतिबन्धित
1 निकोटीनं सल्फेट
2 केप्टोफोल 80% धूड़ा

(ग) कीटनाशक रसायन (उत्पादन उपयोग व आयात के लिए वर्जित)

1 मीथोमाईल 24% (L)

2 मीथोमाईल 12.5% (L)

3 फोसफेमिडोन 85% (SL)

4 कोर्बोफ्रयूरान 50% (SP)

(घ) कीटनाशक रसायन (वापिस हटाए गए)

1 डेलेपान

2 फरबेम

3 फोरमोथियान

4 निक्कल क्लोराईड

5 पेराडाईक्लोरोबेन्जीन (पी. डी. सी. बी.)

6 सीमाजीन

7 वारफारिन

(ड) रजिस्ट्रेशन से वंचित रखे गये कीटनाशी रसायन

1 केल्शियम आरसीनेट

2 ई. पी. एम.

3 एजिनफोस मिथाईल

4 लेड आरसीनेट

5 मेविनफोस (फोसड्रिन)

6 2, 4, 5 टी

7 कार्बोफेनोथियोन

7 वेमिडोथियोन

8 मीफोसफोलान

9 एजिनफास इथाईल

10 बीनापेक्रील

11 डाईक्रोटोफास

12 थाइओडेमेटोन / डाईसलफोटान

13 फेन्टिन एसीटेट

14 फन्टिन हाईड्रोक्साईड

15 काईनोमेथिओनेट (मोरेस्टान)

16 एमोनियम सल्फामेट

17 लेप्टोफास (फोसवेल)

(च) कीटनाशक रसायन (भारत में सिमित उपयोग के लिये)

1 एलूमिनियम फोसफाईड
2 डी. डी. टी.
3 लिनडेन
4 मिथाईल ब्रोमाईड
5 सोडियम साईनाईड
6 मिथोक्सी इथाईल मरक्यूरिक क्लोराईड (MEMC)
7 मोनोक्रोटोफास (सब्जियों के अतिरिक्त सीमित उपयोग के लिये)
8 डायाजिनोन
9 फेनिट्रोथियॉन
10 फेनथियॉन
11 डेजोमैट

(छ) खरपतवारनाशी रसायन (वापिस हटाए गए)

1 एलाक्लोर
2 एट्राजिन
3 क्यूटाक्लोर
4 2, 4 D
5 आक्सीप्लोर फेन
6 पेण्डीमैथालिन
7 सल्फोसल्फयूरॉन

फसल एवं अनुमोदित किस्मों की विषय सूची

गेहूं

एच.पी.डब्ल्यू–155 (ओंकार)

एच.पी.डब्ल्यू. 236

हिमप्रथम (डी.एच.–114)

एच.एस. 542 (पूसा किरण)

सप्तधारा

हिम पालम गेहूं–1 (एच.पी.डब्ल्यू. 360)3

हिम पालम गेहूं–2 (एच.पी.डब्ल्यू. 368)3

केन्द्रीय गेहूँ एच.एस.562

एच.पी.डब्ल्यू. 249 (अस्मि)

एच.पी.डब्ल्यू. 349

वी.एल.डब्ल्यू. 907

एच.एस. 507 (पूसा सुकेती)

वी.एल.डब्ल्यू. 892

एच.एस. 490 (पूसा बेकर)

जौं

एच.बी.एल.–276 (हरित)

एच.बी.एल.–113 (विमल)

एच.बी.एल. 713 (हिम पालम जौं–1)

गोकुल (एच.बी.एल.–391)

पूसा लोसर (बी.एच.एस 380)

पूसा शीतल (बी.एच.एस. 400)

हिम पालम जौं–2 (HBL-804)

चना

हिम पालम चना–1 (डी.के.जी. 986)

हिमाचल चना 2

एच.पी.जी.–17

जी.पी.एफ.–2

मसर

विपाशा (एच.पी.एल.–5)

मारकण्डेय (ई.सी.–1)

भूरी सरसों

के.बी.एस.–3

एच.पी.बी.एस.–1

राया

आर.सी.सी.–4

करण राई

जयंती

व्रांबे हिम पालम राया 172

गोभी–सरसों

नीलम (एच.पी.एन.–3)

ओ.एन.के.–1

जी.एस.सी. 7

तोरिया

भवानी

अलसी

बिनवा (के.एल. 210)

बनेर (के.एल. 224)

हिम अलसी–2 (डी.पी.एल–17)

हिमानी (के.एल. 214)

भागसू (के.एल. 215)

आलू

कुफरी चंद्रमुखी
कुफरी ज्योति

बरसीम

मैसकावी

बी.एल.–1

बी.एल–22

शफतल

एस.एच.–48

रिजका (लुसर्न)

आनन्द

जई

पालमपुर–1

कैन्ट

रैड क्लोवर

पी.आर.सी. 3

व्हाईट क्लोवर

पालमपुर कम्पोजिट

फैस्कयू

हिमा–4

आरचर्ड ग्रास

कोमैट

राई घास

हिम पालम राई घास